॥ ॐ ॥

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

विशेषनिर्णयः

नाहं रामो न मे वांछा,
भावेषु च न मे मनः ।
शांतिमास्थातुमिच्छामि,
चात्मन्येव जिनो यथा ॥ १ ॥
[योगवासिष्ठ वैराग्य प्रकरण.]

प्रसिद्धकर्त्ता.

वकील केशवलाल प्रेमचंद जैनी
बी. ए. एल्. एल्. बी.

अमदावाद.
श्री सीटी प्रिन्टींग प्रेस ढालगरवाडा.
वीर संवत् २४३५ आत्म संवत् १३
विक्रम संवत् १९६५ इ. स. १९०९

मूल्य चार आना.

॥

सर्वरूपं ।

ाति वि-।

ा हरो वा।

यस्याचिन्त्यं चरितमसम भावतस्तं प्रपद्ये ॥

श्रीहरिभद्रसूरिपादाः

जैनं जयति शासनम्.

(पंजाब शहर गुजरांवालामें दो महानस सनातन धर्म्मावलंबियोंके साथ चलते हुये धर्म्म सम्बन्धी तकरारका फैसला.)

" जैन " पत्र सम्पादकजी महाशय;

कृपाकर इस लेखको अपने पत्रमें छपवाकर प्रसिद्ध करदीजिएगा.

जिस समय यहां प्रतिष्ठा महोत्सव बडी धामधूमसे हुआ, उस उत्सवको देखतेही ढुंढक भाइयोंके पेटमें मारे द्वेषके ज्वालायें उठने लगी, फल यह हुआ कि उन्होने एक छोटीसी किताब छपवाकर श्री आत्मारामजी महाराजके विरुद्ध सनातन धर्म्मावलंबि भाइयोंको खडा किया, तथा द्रव्यादिसें उनकी सहायता करने लगे. किताबमें ऐसे वाक्य लिखें हुवेथे, " आत्मारामजी पुजेरेने अपने बनाये अज्ञान तिमिर भास्कर नामक ग्रन्थमें लिखाहै कि वेदोंमे नरमेध, गोमेध तथा अश्वमेध आदि यज्ञोंका विधान है, ब्राह्मणलोग, मनुष्य गाय घोडे आदि प्राणियोंको मारकर यज्ञ करतेथे, ब्राह्मण भाइयो

क्या यह बात सच्ची है ? " इस किताबको देखकर, सनातन धर्म्मावलंबी बहुत बिगडे. उन्होने नोटिसदिया, जिसका आशय यह था, " आत्मारामजी महाराजने अज्ञान तिमिर भास्करमें हमारे शास्त्रोंसे जो जो प्रमाण हिंसा साबित करनेके लिये दिये हैं, उनको सत्य ठहरानेके लिये आपलोग अपने पण्डितोंको बुलावे, हमलोगभी अपने पण्डितोंको बुलाते हैं, अगर इस नोटिसका जवाब नहीं दोगे तो आत्मारामजी मिथ्यावादी समझे जायंगे." इस नोटिसको पाकर जैन भाइयोंकी औरसे उत्तरमें नोटिस दियागया. उसमें यह प्रार्थना कीगइथी, " श्रीमान् आत्मारामजी महाराजने अज्ञानतिमिरभास्करमें वेदादि शास्त्रोंसे जो २ प्रमाण दिये हैं वे सत्य हैं, किताब छपेको इक्कीस वर्ष हुए अभीतक किसी महाशयने उसके विषयमें तकरार नहीं उठाई, आपलोगोंको यदि हुवा हो, तो, अज्ञान तिमिर भास्करमें दिये हुये प्रमाणोंको अपने शास्त्रोंसे मिलाकर स्वयं देख लेवें, अथवा अपने पण्डितोंको दिखलाकर निर्णय कर लेवें. यदि आपके पास पुस्तक न हो, तो हमारे पास आकर देख लेवे, क्योंकि आपसमें विरोध फैलाना अच्छा नहीं है, और गुप्त बातोंको पबलिक (सर्व साधारण) में जाहिर करना, हमलोग अच्छा नहीं समझते हैं. फिर आपकी इच्छा. " इस नोटिसको पाकर वे लोग शान्त नहीं हुये, किन्तु शास्त्रार्थ करनेकेलिये उत्तेजित करने, तथा अपने पण्डितोंको बुलानेका प्रबन्ध करने लगे. श्री संघ गुजरांवालानेभी मुनिराज श्रीवल्लभविजयजी महाराजको तारद्वारा सू-

मित किया, मुनिराज श्री दिल्लीमें चौमासा करना चाहतेथे पर इस समाचारको सुननेही फिर पंजाब आनेवास्ते लौटे. पाठकगण ! सख्त गरमीके दिनोंमे चलनेके कारण पैरोंमे सूजन आगइथी अतएव श्रावक भाइ आग्रहसे अपने २ ग्रामोंमे विश्राम लेनेके लिये आग्रह करतेथे, लेकिन जैन शासनकी किसीप्रकार हेलना न हो, इसलिये मुनिराज बडे वेगसे विहार करनेलगे ऐसेही मुनिराज धन्यवादके पात्र हैं! और जैन पंडित श्री व्रजलालजीको तारद्वारा सुचना दी. वे महाशय सुचना पातेही यहां आगये. इधर सनातनी भाईयोंने पं० भीमसेन शर्म्मा, विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्र तथा पं० गोकुलचंद्रजी आदिको बुलाया, प्रथम पं० भीमसेनजी आये, उन्हे लेनेवास्ते ढुंढक भाइभी स्टेशनपर गयेथे, इतनाही नहिं बल्कि पण्डितजीके गलेमें अपने हाथोंसे पुष्प मालाभी डालते रहे ! तथा सनातन धर्म्मकी जयमें जय मिलातेथे. दूसरे दिन, सनातन भाइ-योंकी ओरसे सायंकालके चारबजे नोटिस तथा एक पत्र मिला, जिसका आशय यहथा,–" आज सायंकालके ६ बजे ब्रह्म अखाडे में सभा होगी, हमारे पं० भीमसेनजी शास्त्रार्थ करनेकेलिये तैयार हैं, आत्मानन्दी पुजेरभी अपने पण्डितको लावें, यदि आत्मानन्दी नहीं आवेंगे तो पं० भीमसेनजीका व्याख्यान होकर सभाका कार्य समाप्त कियाजायगा तथा जैनोंका पराजित होना प्रसिद्ध करदीया जायगा " इस नोटीसको पाकर जैनलोगोंको बडा आश्चर्य हुआ कि

न तो कोइ मध्यस्थ, न तो पुलिसका प्रबन्ध, फिरभी घंटेकी फुरसत (अवकाश) देकर शास्त्रार्थके लिये बुलाना, सभास्थानभी ब्राह्मणोंका, सभापतिभी उन्हींके पक्षपाती पं० लालशङ्करजी, मानो यह एक गुड्डीयोंका खेलही इनलोगोंने समझ लिया ! पाठकगण, सच्ची बात तो यह है कि वेदमें हिंसा है यह बात दुनियामें जाहिर है, बंबई शहरकी धर्म्मसभाने २६ प्रश्न निकालेथे जिनमेंसे आठमें और ग्यारहमें प्रश्नका जवाब तारीख ३० जुलाइ सन १९०४ के ' बंबई समाचार'में छपाहै, जिसमें खुलासा वेदमें हिंसा लिखी है ! परन्तु सनातन धर्म्मावलंबियोंने तथा उनके पं० भीमसेन शर्म्माने जोशमें आकर तथा पक्षपातका चश्मा चढाकर विचार किया कि ब्राह्मण क्षत्रियादि हजारों मनुष्य हमारे पक्षमें हैं, जैनी कुल थोडी संख्यामें, फिरभी ये जैनी हमारे सन्मुख बोलते हैं ? इस लिये इन्हें शास्त्रार्थमें चालबाजीसे अथवा लडाई दंगासे दबाना और प्रसिद्ध कर देना कि जैनी हार गये, पर जैन लोग उनका अन्तःकरण अच्छी तरहसे जानतेथे अतएव थानेदार तथा पुलीशको साथमें लेकर जैन पं० व्रजलालजीको सभामें लेगये. सभामें सनातनी, आर्यसमाजी, ढुंढक, शिख, मुसल्मान आदि ५००० पांच हजारके लगभग मनुष्य एकत्रित (इकठे) हुयेथे. थोडीही देरमें पं० भीमसेनजीका भाषणका प्रारम्भ हुआ. जब भाषणके समाप्तिका समय कुछ बाकी था, इतनेमें जैन पं० व्रजलालजीने पत्रमें लिखकर सभापतिको सुचना दी कि दश मिनिट बोलनेकी इजाजत (आज्ञा) मुझे मिलनी चाहिये

अनन्तर सभापतिकी आज्ञा पाकर उठकर बोलना चाहतेथे. इतनेमें पं० भीमसेनजी बडे आवेशसे बोल उठे कि " प्रतिपक्षी जैनीही बोल सक्ता है, न कि ब्राह्मण ! इसलिये बोलनेकी इजाजत आपको नहीं दी जायगी. " उत्तर देते हुये पण्डितजीने गम्भीरतासे कहा कि " मै जैनी हुं अतएव आपका रोकना अनुचित है. " तदनन्तर पं० भीमसेनजीने कहाकि यह हमको लिख दो. पंडितजीने लिख दिया, और उच्च स्वरसे कहा कि " जैनी बननेका कारण वेद विहित हिंसा है. "

यह सुनकर सभामे कोलाहल मचगया, मारे गुस्सेके पं० भीमसेनजीकी आंखें लाल होगई, तदनन्तर इजाजत पाकर पण्डितजीने यह कहा: " श्री आत्मारामजी महाराजने अज्ञान तिमिर भास्करमें वेदादिशास्त्रोंके जिन प्रमाणोंसे गोमेध, नरमेध, तथा अश्वमेधादि दिखलाये हैं, तथा उन प्रमाणोंका जैसा हिन्दीभाषामें अनुवाद किया है, उनको सत्यसिद्ध करनेकेलिये हम तैयार हैं, परन्तु मध्यस्थ जरूर होना चाहिये. जो निष्पक्षपाती तथा संस्कृत भाषाके पदोंका अर्थ समझनेकी अच्छी योग्यता रखता हो. पं० भीमसेनजीका यह कहना कि " पबलिक मध्यस्थ है. दूसरे मध्यस्थकी आवश्यकता नहि. " बिल्कुल गलत (अनुचित) है, गोया पं० भीमसेनजी अपने मुखसेही सिद्ध करते हैं कि, हम सच्चा शास्त्रार्थ करना नहि चाहते ! यदियोग्य मध्यस्थ नहि मिलसकते हों,

तबतो पं० भीमसेनजीका कहना कुछ मानभी लियाजाता, किन्तु इन्हीं सनातनी भाइयोंने, आर्यसमाजके साथ शास्त्रार्थ करनेके समय, मेयो कॉलेजके प्रिन्सिपल थिबो साहेब, तथा क्विन्स कॉलेजके प्रिन्सिपल वेनिस साहेबको मध्यस्थ बनानेका आग्रह कियाथा, अतएव मैं सम्पूर्ण सभासदोंसे निवेदन करताहुं कि, वेही निष्पक्षपात बुद्धिसें विचार करें; ऐसे शास्त्रार्थमें मध्यस्थकी जरूरत हैं अथवा नहि? बलके मध्यस्थका निषेध सवन्धी पं० भीमसेनजीका व्याख्यान, साफ जाहिर करता है कि मध्यस्थके रहनेपर हमारी चालबाजी चलेगी नहि; किन्तु पोल खुलजायगी." बस इतनाही जैन पं० व्रजलालजीने कहने पाया कि सभापतिने कहा "समय होगया, बोलना बंद करिये" अभी दस मिनिट पूर्ण नहि हुयेथे, किन्तु पांच मिनिट बाकी (शेष) थे, अतएव इस अन्यायको देखकर कई लोगोंने कहदिया कि पक्षपात होरहा है, पर वहां कौन सुनता है. बडी जल्दीसे पं० भीमसेनजीने उठकर कहा कि "वादी, प्रतिवादी दोनों यदि चाहें तब मध्यस्थ नियत कियाजाता है. हमलोग मध्यस्थकों नहि चाहते हैं, क्योंकि उसमें रिश्वतखोरी (घुसदेना) होती है, अब समय होगया, अतएव सभा बन्द कीजाती है, कल फिर सभा होगी." तदनन्तर दोनों पक्षवाले "जैन धर्म्मकी जय," "सनातन धर्म्मकी जय," पुकारते हुये सुरक्षित अपने घर गये. सभास्थलमें कोइ २ बहादुर अपनी बहादुरी दिखलाने-

की चेष्टा करतेथे, पर पुलिसनेभी बहादुरीका फल हवालातमें बन्द होना पडेगा, इत्यादि कहकर शान्त किया. दूसरे दिन मुरादाबादके पं० ज्वालाप्रसादजी, तथा मेरठके पं० गोकुलचंदजी आगये, और सभाकी गई, व्याख्यानमें जैनियोंको मनमानी गालियां देकर पं० ज्वालाप्रसादजीने विद्यावारिधि पदवीकी सार्थकता दिखला दी ! तथा पं० भीमसेनजी भी अपनी वृद्धावस्थाकी शान्ति दिखलाकर लोगोंको मात करतेथे ! बिचारे ढुंढक भाइयोंकी बडी दुर्दशा होतीथी ! क्योंकि खर्चभी देना और सभामें पण्डितोंकी गालियांभी सुनना. अन्तमें, परिणाम यह हुआ की लोगोंमे अत्यन्त अशान्ति फैल गई, प्रतिक्षण मारपीट होनेकी सम्भावना होने लगी, अतएव पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट बहादुरको सब प्रबन्ध करना पडा. उन्होंने कहा की. "दोनों पक्षवाले लोग, अपने २ पण्डितोंको लेकर, कल सवेरे सातबजे कोतवालीमें हाजिरहो. जज्जसाहब व चेटर्जी साहब संस्कृतके जानकार हैं उनके समक्ष तुमारा फैसला करादिया जायगा" ! यहां पाठकोंको यह दिखलाना आवश्यक हैं कि, जैनोंकी ओरसे पं० भीमसेनशर्म्माको एक रजिष्टर पत्र भेजागयाथा, परन्तु उन्होंने लिया नहीं. पत्रका आशय यह था की, आप ब्राह्मण स्मृति आदि ग्रन्थोंमें किन २ ग्रन्थोंको प्रमाण मानते हैं ? खैर ! पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट साहबसे सनातन धर्म्मसभाके सेक्रेटरी पं० केदारनाथने कहाकि, हम पांच प्रश्न जैनियोंको देतें हैं, कल सवेरे इन प्रश्नोंका जवाब लिखकर लावें. उसी समय जैन

भाइयोंकी ओरसेभी रजिस्टरपत्र दिखलाया गया, और कहागयाकि, इस प्रश्नका उत्तर, सनातनी पण्डितभी लिखकर लावें. दूसरे दिन सवेरे सातबजे दोनों पक्ष कोतवालीमें उपस्थित हुये उसी समय साहब आगये, पुलिस इन्स्पेक्टर द्वारा भीड हटवाई गई चुनेहुये शिक्षित लोगोंको छोडकर, अन्यलोग बाहर करदिये गये तथा फाटक बन्द करदिया गया.

श्रीमान् पं० ज्वालासाहब डिस्ट्रिक्ट जज्ज तथा हेडमास्टर चटर्जीसाहब मध्यस्थ किये गयेथे. पाठकगण, आपलोगोंको, मध्यस्थके विषयमें कुछ लिखना अप्रासंगिक नहीं समझा जायगा, मध्यस्थ जज्जसाहब ब्राह्मण कुल तिलक, निष्पक्षपाती अमृतसर निवासी आपके पूर्वजभी बडे बडे अधिकारी थे. धर्म्मान्दोलनके कारण परस्पर बढीहुई अशान्तिको पक्षपातरहित होकर दूर करनेके कारण, आप जैनीमात्रके धन्यवादके पात्रहैं. और ऐसेही संस्कृतज्ञ मि० बी. सी. चटर्जी बी. ए. हेडमास्टरभी उपस्थित थे. मौलवी नजीरहुसेन, मौलवी सय्यद कलन्दरहुसेन, डिस्ट्रिक्ट सुपरवाइझर, आर्यसमाजके नेता मि० आत्माराम अमृतसरी आदि प्रतिष्ठित हिन्दु, मुसल्मान तथा राजकर्म्मचारी उपस्थित थे. अनन्तर कार्य आरम्भ हुआ जज्जसाहबने सनातनी भाइसे पूछा कि, अज्ञान तिमिर भास्करको छपे कितने दिन हुए? उत्तरमें कहा गया इक्कीस वर्ष. फिर जज्जसाहेबने पूछा कि, इतने दिनतक क्यों तकरार नहीं उ

लाई गई ? उन्होंने कहा, अभितक किताब देखनेमे नही आईथी अनन्तर एक जैन भाईने कहाकि यह बात गलत है, क्योंकि पं० भीमसेनजीने कहाथा, " एक वार मैं इस किताबका खण्डन करचुका हूं, " फिर सनातनी भाइयोंकी प्रार्थनानुसार जज्जसाहबने कहा कल पांच प्रश्न जैनियोंको दियेथे वे लावें. जैनियोंकी ओरसे लिखित प्रश्नोंके उत्तरकी कॉपी जज्ज साहबके सन्मुख रक्खी गई और कहा गया कि, हम लोगोंने सनातनीओंको जो प्रश्न दियेथे उनका उत्तर चाहते हैं, जज्ज साहबके मांगनेपर पं० भीमसेनजी बोले कि, प्रथम हमारे प्रश्नका जवाब दिया जाय पीछे इनके प्रश्नका जवाब दूंगा, क्यों कि प्रथम हमारी ओरसे प्रश्न किये गयेथे, उसी समय जैनियोंकी तर्फसे रजिस्टर पत्र दिखलाकर कहा गया कि, प्रथम हमारी ओरसेही प्रश्न किया गयाथा, तपास करनेपर यही बात सच्ची निकली तदनन्तर जज्ज साहबने जैन पं० व्रजलालजीसे कहाकि, आप अपने प्रश्न सुनादेवें, पश्चात् प्रश्न सुनकर, उन्होंने पण्डित भीमसेनजीसे पूछा कि, " मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम् " इस महर्षिके सूत्रानुसार ब्राह्मण ग्रन्थको वेदत्व प्राप्त है, अतएव मैं आपसे पूछता हूं कि, ब्राह्मण ग्रन्थ वेद हैं वा नहीं ?

पाठको ! यहां यह लिखना आवश्यक है कि, सनातन धर्म्मावलंबिमात्र ब्राह्मण ग्रन्थोको वेद मानते हैं और उन्हींमें गोमेध तथा नरमेध बडे विस्तारसे लिखा है, अतएव पं० भीमसेनजीने

बडी चालाकीसे प्रश्न दियाथा कि "मूल वेदमेसे गोमेध तथा नरमेध दिखलाओ," इससे उपर लिखा पूछा गया था !

पं० भीमसेनजीने कहा, ब्राह्मण ग्रंथोंको वेद मानताहुं परन्तु मैं जैनी पण्डितसें पूछताहुं कि, वे मूल वेदमेंसे गोमेध तथा नरमेध दिखलावे.

जज्जसाहब पं० भीमसेनजीसे बोले, "मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्" इस वचनसे ब्राह्मण ग्रन्थोंको वेदत्व प्राप्त है, उसे आप स्वीकारभी करते हैं. बस अब आपको जैन पं० व्रजलालजी अपनी इच्छानुसार संहिता अथवा ब्राह्मणभागसे नरमेध तथा गोमेध दिखलावेंगे. यह आपका आग्रह करना कि, मूलमेंसेही दिखलावे, अनुचित है !

पं० भीमसेनजीने कहा, ब्राह्मण ग्रंथ, मूल वेदका व्याख्यान है, अतएव मूलका आग्रह कियाजाता है.

जज्जसाहबने कहा, इसमें क्या प्रमाण है कि, ब्राह्मण ग्रन्थ मूल वेदका व्याख्यान है ? फिर यह शङ्का उठती है कि वह व्याख्यान वेदानुकूल है अथवा नहि ?

तदनन्तर पं० ज्वालाप्रसादजी बोलनेलगे, उन्होंनेभी पिष्टपेषणसाही किया जिसे सुनकर जज्जसाहबने स्पष्ट कहदिया कि, आप लोग बराबर उत्तर नहि देते हैं.

इतनेमें तीसरे सनातनी पण्डितने कहा कि, "गौणमुख्ययोर्मुख्ये कार्यसम्प्रत्ययः" इस न्यायसे संहिता मुख्य तथा ब्राह्मण ग्रन्थ गौण है. अतएव जैन पण्डितको मूल वेदसेही हिंसा बतलानी चाहिये.

जज्जसाहबने कहा, ऐसा क्यों? यह न्याय इस स्थलकेलिये नहि आपलोग विचारकर बोलें!

(इतना कहकर हंसदिये और सनातनी पण्डितोंसे बोले कि, "आपलोगोंमेंसे किसीनेभी उत्तर ठीक नहि दिया) खैर! जैन पं० व्रजलालजी! आप मूल वेदमें हिंसा बतलासकतेहो या नहि? उत्तरमें पण्डितजीने कहा कि, "हमारा यह पक्षही नही है, क्यों कि आत्मारामजी महाराजके बनाएहुये अज्ञानतिमिरभास्करके लेखको सत्य सिद्ध करना यही हमारा पक्ष है. यदि मूल वेदके विषयमें आप निर्णय करना चाहतेहों तो, स्वयं पं० ज्वालाप्रसादजीने तथा पं० भीमसेन शर्म्माने अपनी लेखनिसेही मूल वेदमें हिंसा सिद्ध की है!!" इस वाक्यको सुनकर जज्जसाहबने कहा, दिखलाओ. शीघ्रही पं० ज्वालाप्रसाद मिश्रजीका "मिश्र भाष्य" दिखलायागया, जिसमें अश्वको मारकर उसके मांसको पकाना इत्यादि अश्वमेध यज्ञका वर्णन लिखाथा! वैसेही पं० भीमसेनजीका लेख दिखलायागया, उन्होंने साफ लिखाहै "वेदमें लिखा है कि आयेहुये ब्राह्मण वा क्षत्रिय राजा वा अतिथिकेलिये बडे बैल वा

वडे बकराको पकावे. " इन वाक्योंको सुनकर सनातन धर्म्मावलंबी तथा उनके पं० भीमसेनजी व ज्वालाप्रसादजी कुछभी नहि बोल सके !

तदनन्तर मध्यस्थ पुरुषोंने कहा कि जो कुछ मतलव है हम खूब समझगये हैं मगर हम भ्रातृभावसै आपसमें राजीमन्दा होजावे और ऐसे केस वृद्धिको प्राप्त न होवे इसमें अच्छा समझते हैं, आखीरकार मध्यस्थ पुरुषोंका वचन मान्य रखना मुनासब समझागया ! और परस्पर भ्रातृभावका राजीमन्दा लिखागया ! यह वृत्तान्त जैसा मेरे अनुभवमें आया पाठकवृन्दको सूचनार्थ लिखागया है, यदि इसमें कुछ न्यूनाधिक लिखागया हो, तो दोनोंही पक्षवाले मुझपर क्षमा करें ! ! !

K. C. Bhutt.

(२६ जुलाइ १९०८)

जैन.

☞ (नोट) ❋ इस कार्यमें शहर जलंधर निवासी यतिजी केसरऋषिजी. नेभी प्रशंसनीय मदद दीथी ! आपकी धर्मोपरि पूर्ण श्रद्धाहै ! पढे हुएभी आप प्रायः यतिवर्गमें उच्च कोटिके लायक हैं ! यदि आपके जैसा ख्याल अन्य यतिवर्गका होवेतो जैनधर्मोन्नति शीघ्रही होजावे इतनाही नहीं बलकि जैनधर्मोपरि झूठे आक्षेप करने वालोंको खूब शिक्षा मिलजावे. ! ! !

"पंडित भीमसेनजी शर्माका उद्गार"

गुजरांवाला पंजाब.

जैनधर्मावलम्बी लोगोंमें कई फिर्के होने परभी ढुंढेरे और पुजेरे ये पंजाबमें विशेष करहैं। पुजेरे जैनियोंमें एक आत्माराम साधु हो चुका है उक्त साधुने एक पुस्तक अज्ञान तिमिर भास्कर नामक छपायाथा जिसमें वेदादि मान्यशास्त्रोंकी ऋषि महर्षियोंकी और विशेषकर ब्राह्मण मात्रकी खूब निन्दा की है। वेदको हिंसादि अधर्म फैलाने वाला कहाहै। सब सनातन धर्मी आर्यसमाजी और स्वा० दयानन्दको भी हिंसक अधर्मी लिखाहै॥ पंजाबमें नागरीका प्रचार कमहै इससे उस पुस्तकका हाल सब कोई नहीं जानताथा। ढुंढेरे जैनियोंने पुजेरोंका खंडन करते हुए अज्ञान तिमिर भास्करका अनुवाद करके दोतीन ट्रैक्ट उर्दूमें छपा दिये जिनको देखकर सनातन धर्मी पबलिकमें बडी हलचल पैदा हो गयीकि सनातन धर्मके वेदादि शास्त्रोंमें मनुष्यका तथा गौका मारना लिखाहै तो हम वेदको छोडदेंगे। ढुंढेरोंकी चालाकी यहथीकि सनातन धर्मी दलको अपने शत्रु पुजेरोंका विरोधि बनादें तो इन दोनोंमें खूब झगडा हो। सो यदि सनातन धर्मी ऐसा कहतेकि हम जैनधर्मके सभी फिर्कोंको वेदविरुद्ध तथा नास्तिक मानते हैं हम सभीका खंडन करेंगे तो एक पुजेरोंके साथ झगडा कम होता। सो न

हुआ किन्तु पुजेरोंसे बखेडा बढ गया। शास्त्रार्थ होनेकी बात चीत चली, इटावेसे पं० भी० श० और मुरादाबादसे पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र तथा मेरठसे पं० गोकुलचंदजी गुजरांवालेमें पहुंचे। गुजरांवालेमें चार दिन बडे समारोहसे सभा हुई। पहिले दिनकी सभामें कुछ जैन लोग आये। पुजेरे जैनियोंकी ओर कोई पण्डित नहींथा। काशीकी जैन पाठशालामें पढनेवाला एक ब्राह्मण विद्यार्थी (जिसने लघु कौमुदीभी ठीक नहीं पढ पायीथी) शास्त्रार्थके लिये आया। अनुमानसे जाना गयाकि कुछ लोभ देके उसे वेद विरोधी बनाया गयाथा।

जब सभामें वह विद्यार्थी बोलनेको खडा किया गया तब सनातन धर्मियोंने पूछाकि तुम कौन हो, उसने कहा मैं काशीकी जैन पाठशालाका अध्यापक ब्राह्मण हूं। तब सनातन धर्मीओंने कहाकि यहां जैनीओंके साथ शास्त्रार्थ है, क्या तुमने वेदोक्त धर्म त्याग दियाहै, क्या तुम जैनी हो गये हो। ऐसा सुनकर विद्यार्थीका चेहरा बिगड गया, कुछ घभरा गया, तोभी लोभ वश मिथ्या बोलाकि मैनें वैदिक धर्म छोड दिया मैं जैन हो गया हूं। तब कहनेकी इजाजत होनेपरभी उससे कुछ न कहा गया। केवल यही कहा कि गुजरांवालाके कलक्टर साहब सभापति हों। २२ प्रबन्ध कर्त्ता हों कोई अंगरेज मध्यस्थ हो तब शास्त्रार्थ होना चाहिये। सनातन धर्मकी ओरसे पबलिकको सुनाया गयाकि शास्त्रार्थ टालनेके लिये यह इनकी बहा-

नाबाजी है । सभामें सिद्ध किया गयाकि वेदमें मनुष्यको तथा गौको कदापि मत मारो इनकी रक्षा करो एसा साफ २ लिखा है प्रमाण दिखाये गये आत्मारामको मिथ्यावादि जैनियोंको निर्दयी हिंसक नास्तिक सिद्ध किया गया तीन चार दिन तक जैनोंको सब प्रकार सभामें बुलाया पर घबडाके नहीं आये डर गये सनातन धर्मका जय जयकार होके सभा विसर्जन हुई.

ब्राह्मण सर्वस्व मासिकपत्र संपादक पंडित भीमसेन शर्मा—भाग—५—अंक १२ पृष्ठ ४५७—४५८ ॥

☞ पूर्वोक्त दोनों अखबारोंके लेखको देखकर वाचकवृंद स्वयं विचार करसके इसवास्ते यह उद्यम कियागयाहै ना कि, पक्षपात करनेके लिये. इस वास्ते वाचकवृंदसे सविनय प्रार्थना है कि, निष्पक्षपातहो स्वयं निर्णय करलेवें इति ॥

प्रसिद्धकर्त्ता.

विशेष निर्णय.

तारीख २६ जौलाई सन १९०८ के जैनमें K. C. BHUTT का निष्पक्षपात लेख पढकर जो कुछ आनंद प्राप्त हुआहै वचनागोचर ही है ! आनंदकंद जिनेंद्रचंद्रशासनका शासन पाकर, कोईभी कुशासन शासन नहीं कर सकता ! प्रत्युत आपही शासनका आसन होजाता है ! सो प्रत्यक्षतया सिद्ध हो चुका है और पुनरपि होगा !

महात्माश्री भर्त्तृहरिजीका वाक्यहै—"सत्यं चेत्तपसा च किम्—" परंतु आश्चर्यकी बातहै कि निज कदाग्रहको सिद्ध करनेके लिये सत्यको त्याग अपने मंतव्यसे भाग असत्यकाही राग किया जाताहै ! यहां तककि निज पवित्र हस्त लिखित पाठभी याद नहीं आताहै !

आजकाल प्रायः नई रोशनीका एसा असर मालूम होताहैकि जो न कहा जासकता न लिखा जा सकता ! सनातनी भाई साहिब स्वामी दयानंद सरस्वतीजीके वेद भाष्योपरि आक्षेप करतेहैं कि स्वामीजी पूर्व पद्धतिको छोड नये अर्थ जोड सनातनी पूर्वर्षि विरचित भाष्यसे प्रीति तोड बैठे हैं ! परंतु आधुनिक प्रक्रियाको देखतेहुए प्रकटतया भान होता है कि सनातनी पंडित महात्माभी स्वामीजीकाही अनुकरण करना पसंद कर बैठे हैं ! इस बातका अनुभव

जिसको करना होवे वो महीधरभाष्य तथा मिश्रभाष्य दोनोंको पक्षपातकी दृष्टिको त्याग अवलोकन कर लेवें ! स्वयंही ज्ञात होजावेगा !

मिश्रभाष्य विद्यावारिधि महोपदेशक भारतधर्म महामंडल पंडित ज्वालाप्रसाद मिश्रजीने बनाया है. नमूनेके लिये यजुर्वेदभाष्य अध्याय २३ का २०—२१ मंत्र लिखा जाता है.

ताऽउभौ चतुरः पदः सम्प्रसारयाव स्वर्गे लोके ।
प्रोर्णुवाथां वृषा वाजी रेतो धारेतो दधातु ॥ २० ॥

(महीधर भाष्य.)

पूर्व मंत्र शेषः तौ त्वमहं च उभौ चतुरः पदः पादानावां सम्प्रसारयाव तव द्वौ मम द्वौ एवं संवेशनप्रकारः का० [२०. ६. १४] अधिवासेन प्रच्छादयति स्वर्गे लोकऽइति । अधिवासेनाश्वमहिष्यौ छादयति अध उपरिष्टाच्चाच्छादनक्षमं वासोऽधिवासः अश्वदेवत्यम् । अध्वर्युर्वदति । हे अश्वमहिष्यौ युवां स्वर्गे लोकेऽस्यांयज्ञभूमौ प्रोर्णुवाथां वास आच्छादयतम् । ऊर्णुञ् आच्छादने एष वै स्वर्गो लोको यत्र पशुं संज्ञपयन्तीति [१३. २. ८. ५.] श्रुतेः ॥ का० [२०. ६. १६.] अश्वशिश्नमुपस्थे कुरुते वृषा वाजीति । महिषी स्वयमेवाश्व शिश्नमाकृष्य स्वयोनौ स्थापयति । अश्वदेवत्यम् । वाजी अश्वो रेतो दधातु मयि वीर्यं स्थापयतु कीदृशोऽश्वः वृषा सेक्ता रेतोधाः रेतो दधातीति रेतोधाः वीर्यस्य धारयिता ॥ २० ॥

(मिश्रभाष्य.)

ऋष्यादि (१) ॐ ताउभा इत्यस्य प्रजापतिर्ऋषिः । आसुर्युष्णिक्छन्दः । लिङ्गोक्ता देवता । वि० पू० । (२) ॐ स्वर्गे इत्यस्य याजुष्यनुष्टुप्छं० । अश्वो देवता । अधिवासेनाश्वाच्छादने विनियोगः । (३) ॐ वृषेत्यस्य याजुषी जगती छं० । लिङ्गोक्ता देवता । अश्वस्पर्शे वि० ॥ २० ॥

मंत्रार्थः—(ता) तुम और हम (उभौ) दोनो (चतुरः) चार (पदः) पदों वा पादोंको (संप्रसारयाव) भलीप्रकार प्रसारण करैं [दो तुम्हारे अर्थात् धर्म और मोक्ष प्रजापतिके अधीन होनेसे धर्म और मोक्ष प्रजापतिके चरण हैं " द्विपद्वै पुरुषः पुरुषो हि प्रजापतिः " इतिश्रुतेः [७ । ४ । १ । १५] दोमेरे अर्थ और काम इसप्रकार चारों पदार्थोंको विस्तृत करैं] १ । विधिः-(१) अगला मंत्र पढकर महिषीको अध्वर्यु वस्त्रसे आच्छान करै [का० २० । ६ । १५] मन्त्रार्थः—हे अश्वरूप प्रजापते ! हे महिषी ! तुम दोनों (स्वर्गे लोके) इस यज्ञभूमिमें (प्रोर्णुवाथाम्) वस्त्र आच्छादन करो २ । विधिः-(३) महिषी प्रजापतिके तेजको यज्ञकर्मद्वारा निष्पादन कर श्रद्धानामक कारण जलमें स्थापन करती है अर्थात् फलके उत्पादन पर्यंत सूक्ष्म रूपसे धारण करती है [का० २० । ६ । १६] मंत्रार्थः—(वृषा) सेचनमें समर्थ (रेतोधाः) वीर्यरूप तेजका धारण

करनेवाला (वाजी) बलवान् " वाजो बलम् " [नि० अ० २ खं० ९ ना० २] प्रजापति (रेतः) तेजयुक्त श्रद्धानामक जलको (स्थापयतु) मुझमें स्थापन करै सर्वके अग्निसोमात्मक होनेसें दोनोंके फल जनक होनेसे प्रजापति तेज विशिष्ट है ३ ॥ २० ॥

प्रमाणानि—" ता उभौ चतुरः पदः सम्प्रसारयावेति मिथुनस्यावरुध्यै स्वर्गे लोके प्रोर्णुवाथा मित्येषवै स्वर्गो लोको यत्र पशुं संज्ञपयन्ति तस्मादेवमाह वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधात्विति मिथुनस्यैवावरुध्यै " [श० १३ । २ । २ कं० ५] " महिषीमश्वायोपनिपादयन्त्यथैनावधिवासेन सम्प्रोर्णुवन्ति स्वर्गे लोके प्रोर्णुवाथामित्येषवै स्वर्गो लोको यत्र पशुं संज्ञपयन्ति निरायत्याश्वस्य शिश्नंमहिष्युपस्थे निधत्ते वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधात्विति मिथुनस्यैव सर्वत्वाय " [श० १३ । ३ । ३ । ४ । २] " अश्वशिश्नमुपस्थे कुरुते वृषावाजी " इति [का० २० । ६ । १६] ॥ २० ॥

तात्पर्य—राज्य प्रकरणमें राजा और प्रजा दोनों मिलकर चारों पदार्थों अर्थात् अर्थ धर्म काम मोक्षकी सिद्धिका यत्न करै इससे सुखकी प्राप्ति होगी इस स्थलमें यही स्वर्गलोक है जहां पशु संज्ञपन होताहै इसकारण करते हैं कि सेचनमें समर्थ वाजीबल धारण करै [कर्ममें] महिषी प्रतीक वा अश्वके समीप उपस्थित हो कर्मकी मीमांसा करै यह महिषी प्रजाका रूप है राजाका तेज अपनेमें धारण किये हैं प्रजापतिके तेजको यज्ञ कर्मद्वारा निष्पादन कर

श्रद्धानामक कारण जलमें स्थापन अर्थात् फलके उत्पादन पर्यंत सूक्ष्म रूपसे अपनेमें धारण करती है ॥ [मिश्रभाष्य उत्तरार्द्ध पृष्ठ ९८४-८५.]

(दयानंदभाष्य.)

पदार्थः—हे राजा प्रजाजनो तुम (उभा) दोनों (तौ) प्रजा राजाजन जैसे (स्वर्गे) सुखसे भरे हुए (लोके) देखने योग्य व्यव-हार वा पदार्थमें (चतुरः) चारों धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष (पदः) जोकि पाने योग्य हैं उनको (प्रोर्णुवाथाम्) प्राप्त होओ वैसे इनका हम अध्यापक और उपदेशक दोनों (संप्रसारयाव) विस्तार करें जैसे (रेतोधाः) आलिंगन अर्थात् दूसरेसे मिलनेको धारण करने और (वृषा) दुष्टोंके सामर्थ्य वर्षाने अर्थात् उनकी शक्तिको रोकने हारा (वाजी) विशेष ज्ञानवान् राजा प्रजाजनोंमें (रेतः) अपने प-राक्रमको स्थापन करे वैसे प्रजाजन (दधातु) स्थापन करें ॥२०॥

भावार्थ—इसमंत्रमें वाचक लु०—जो राजा प्रजा पिता और पुत्रके समान अपना वर्त्ताव वर्त्तें तो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष फलकी सिद्धिको यथावत् प्राप्त हों जैसे राजा प्रजाके सुख और बलको बढावें वैसे प्रजाभी राजाके सुख और बलकी उन्नत्ति करें ॥२०॥

स्वामी दयानंद सरस्वति विरचित यजुर्वेद भाषा भाष्य द्वितीय भाग पृष्ठ ८७६-७७

तथा इसी मंत्रकी बाबत स्वामी दयानंद सरस्वतिजीने निज विरचित ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका संवत् १९४१ में छपीके पृष्ठ ३४९-५० में ऐसे लिखाहै.

॥ महीधरस्यार्थः ॥ अश्वशिश्नमुपस्थे कुरुते वृषा वाजीति ॥ महिषी स्वयमेवाश्व शिश्नमाकृष्य स्वयोनौ स्थापयति ॥

॥ भाषार्थ ॥

महीधरका अर्थ ॥

यजमानकी स्त्री घोडेके लिंगको पकडकर आपही अपनी योनिमें डाल देवे ॥

॥ सत्योऽर्थः ॥

ता उभौ चतुरः पदः सम्प्रसारयावेति मिथुनस्यावरुद्ध्यै स्वर्गे लोके प्रोर्णुवाथामित्येष वै स्वर्गो लोको यत्र पशुं संज्ञपयन्ति तस्मादेवमाह वृषा वाजी रेतोधा रेतो दधात्विति मिथुनस्यैवावरुद्ध्यै । श० कां० १३ अ० २ ब्रा० २ । कं० ५ ॥

भाष्यम्

आवां राजप्रजे धर्मार्थकाममोक्षान् चतुरः पदानि सदैव मिलिते भूत्वा सम्यक् विस्तारये वहि ॥ कस्मै प्रयोजनायेत्यत्राह ।

स्वर्गे सुखविशेषे लोके द्रष्टव्ये भोक्तव्ये प्रियानंदस्य स्थिरत्वाय येन सर्वान् प्राणिनः सुखैराच्छादयेवहि ॥ यस्मिन् राज्ये पशुं पशु-स्वभावमन्यायेन परपदार्थानां द्रष्टारं जीवं विद्योपदेशदंडदानेन सम्यगवबोधयन्ति सैष एव सुखयुक्तो देशोहि स्वर्गो भवति । तस्मात्कारणादुभयस्य सुखायोभये विद्यादिसद्गुणानामभिवर्षकं वाजिनं विज्ञानवन्तं जनं प्रति विद्याबले सततमेव दधान्वित्याहायं मंत्रः ॥

॥ भाषार्थ ॥

(ताउभौ) राजा और प्रजा हम दोनों मिलके धर्म अर्थ काम और मोक्षकी सिद्धिके प्रचार करनेमें सदा प्रवृत्त रहें किस प्रयोजनके लिये कि दोनों की अत्यंत सुखस्वरूप स्वर्गलोकमें प्रिय आनंदकी स्थितिके लिये जिससें हम दोनों परस्पर तथा सब प्राणियोंको सुखसे परिपूर्ण करदेवें जिस राज्यमें मनुष्य लोग अच्छी प्रकार ईश्वरको जानते हैं वही देश सुखयुक्त होताहै इससे राजा और प्रजा परस्पर सुखके लिये सद्गुणोंके उपदेशक पुरुषकी सदा सेवा करें और विद्या तथा बलको सदा बढावें इस अर्थका कहनेवाला (ताउभौ) यह मंत्रहै इस अर्थसे महीधरका अर्थ अत्यंत विरुद्ध है ॥

तात्पर्य—यजमान अश्वको इस मंत्रसे अभिमंत्रण करै ॥ २१ ॥

(मिश्रभाष्य पृष्ठ ९८५-८६)

(दयानंद भाष्य)

पदार्थः—हे (वृषन्) शक्तिमन् (यः) जो (स्त्रीणाम्) स्त्रियोंके बीच (जीवभोजनः) प्राणियोंका मांस खानेवाला व्यभिचारी पुरुष वा पुरुषोंके बीच उक्त प्रकारकी व्यभिचारिणी स्त्री वर्त्तमानहो उस पुरुष और उस स्त्रीको बांधकर (उत्सक्थ्याः) ऊपरको पग और नीचेको शिर कर ताडना करके और अपनी प्रजाके मध्य (अव, गुदम्) उत्तम सुखको (धेहि) धारण करो और (अंजिम्) अपने प्रकट न्यायको (संचारय) भली भांति चलाओ ॥ २१ ॥

भावार्थ—हे राजन् जो विषय सेवामें रमते हुए जन वा वैसी स्त्री व्यभिचारको बढावे उन २ को प्रबल दंडसे शिक्षा देनी चाहिये ॥ २१ ॥

[यजुर्वेदभाषा भाष्य पृष्ठ ९७७]

तथा वेदभाष्य भूमिका पृष्ठ ३५९-६०में ऐसा लेखहै.

॥ महीधरस्यार्थः ॥

यजमानोऽश्वमभिमन्त्रयते । हे वृषन् सेक्तः अश्व उत्ऊर्ध्वे सक्थिनी ऊरू यस्यास्तस्या महिष्या गुदमव गुदोपरि रेतो धेहि वी-

र्यं धारय ! कथं तदाह अञ्जिं लिङ्गं सञ्चारय योनौ प्रवेशय । योऽञ्जिः स्त्रीणां जीवभोजनः । यस्मिन् लिङ्गे योनौ प्रविष्टे स्त्रियो जीवन्ति भोगांश्च लभन्ते तं प्रवेशय ॥

॥ भाषार्थ. ॥

(उत्सक्थ्या०) इस मंत्रपर महीधरने टीकाकी है यजमान घोडेसे कहता है हे वीर्यके सेचन करने वाले अश्व तू मेरी स्त्रीके जंघा ऊपरको करके उसकी गुदाके ऊपर वीर्य डाल दे अर्थात् उसकी योनिमें लिंग चलादे वह लिंग किस प्रकारका है कि जिस समय योनिमें जाता है उस समय उसी लिंगसे स्त्रियोंका जीवन होता है और उसीसे वे भोगको प्राप्त होनी हैं इससे तू उस लिंगको मेरी स्त्रीकी योनिमें डाल दे ।

॥ अथ सत्योऽर्थः ॥

(उत्सक्थ्याथ०) हे वृषन् सर्व्व कामानां वर्षयितः प्रापक ससभाध्यक्ष विद्वन् त्वमस्यां प्रजायामञ्जि ज्ञानमुखन्यायप्रकाशं सञ्चारय सम्यक् प्रकाशय (यःस्त्रीणां जीवभोजनः) कामुकः सन् नाशमाचरति तं त्वमवगुदमधः शिरसं कृत्वा ताडयित्वा कारागृहे धेहि यथा स्त्रीणां मध्ये या काचित् उत्सक्थी व्यभिचारिणी स्त्री भवति तस्यै सम्यग् दंडं ददाति तथैव त्वं तं जीवभोजनं परप्राणनाशकं दुष्टं दस्युं दंडेन समुच्चारय ॥

॥ भाषार्थ ॥

(उत्सक्थ्या०) परमेश्वर कहता है कि हे कामनाकी वृष्टि करनेवाले और उसको प्राप्त कराने वाले सभाध्यक्ष सहित विद्वान् लोगो तुम सब एक संमति होकर इस प्रजामें ज्ञानको वढाके न्याय पूर्वक सबको सुख दिया करो तथा जो कोइ दुष्ट (जीवभोजनः) स्त्रियोंमें व्यभिचार करने वाला चोरोंमें चोर ठगोंमें ठग डाकुओंमें डाकू प्रसिद्ध दूसरोंको बुरे काम सिखानेवाला इत्यादि दोषयुक्त पुरुष तथा व्यभिचार आदि दोषयुक्त स्त्रीको ऊपर पग और नीचे शिर करके उसको टांग देना इत्यादि अत्यंत दुर्दशा करके मारडालना चाहिये क्योंकि इससे अत्यंत सुखकालाभ प्रजामें होगा ॥

पूर्वोक्त वर्णनसे वाचकवृंद स्वयं विचार करलेंवेंगेकि वेदोंकी बाबत कैसी गरबड होरही है! इनमेंसे कौनसा अर्थ ठीक है? किसने यथार्थ अर्थ किये हैं और किसने अयथार्थ किये हैं? यदि महीधरजीका ही अर्थ ठीकहै तो मिश्रभाष्यका अर्थ सनातन भाई साहिब कदापि स्वीकार नहीं करसकते! और कदापि करलेंवेंगे तो महीधरजीका भाष्य अयथार्थ मानना पडेगा सो तो सनातन धर्मावलंबी तीन कालमेंभी स्वीकार न करेंगे यदि करेंगे तो सनातन धर्मसे किनारा करना पडेगा! तथा महीधरजीके अर्थको छोड मिश्रभाष्यके अर्थको स्वीकार करेंगे तो स्वामीदयानंदजीके अर्थभी स्वीकार करने पडेंगे! मिश्रभाष्यका अर्थ यथार्थ है और दयानंद-

भाष्यका नहीं इसमें क्या प्रमाण है ? क्योंकि प्राचीन भाष्यके अर्थको नहीं माननेका या अयथार्थ सिद्ध करनेका अथवा तो उसकी लिखी बातोंके ढांपनेका प्रयास तो दोनों महाशयोंका एक सदृशही प्रायः भान होता है !

अस्तु ! परंतु आश्चर्य तो यह है कि वेदकी महत्त्वताके घटानेका आक्षेप जैनोंपर कियाजाताहै और काम स्वयं ही कीये जाते हैं ! जिसका न्याय वाचक वृंद स्वयंही करलेवें ! वेदमें हिंसा नहीं है सनातन धर्मी इस बातको तबही स्वीकार कर सकते हैं जबकी ब्राह्मण, उपनिषद्, सूत्र, स्मृति, पुराण तथा शंकराचार्य, सायनाचार्य, महीधर विरचित भाष्यादिको स्वीकार न करें ! अन्यथा आपके ही माने शास्त्रोंमें आपके ही पूर्वाचार्योंने नरमेध, अश्वमेध, गोमेध, अनुस्तरणी, मधुपर्क, इत्यादि संबंधी जो जो उल्लेख किये हैं तदनुसार कोई निज ग्रंथमें तद्विषयिक वर्णन करे तो उसपर आप किसी प्रकारकाभी आक्षेप नहीं करसकते हैं यदि आपमें न्यायदृष्टि है तो—अन्यथा अन्याय दृष्टिसें चाहे कोई कुछ करें !

मि. भट्टने तारीख ३० जौलाई सन १९०४ के बंबई समाचारका प्रमाण लिखा है सो दुरुस्त है वाचक वृंदके लाभके लिये उसकी नकल कीजाती है.

धर्मसभाके २६ प्रश्न.

आठवें और ग्यारहवें सवालका देनेमें आना जवाब.

कितनेक सवालोंकी खामी भरी भाषा.

आर्यसमाजीयोंका ख्याली अर्थ.

आदमीके बलिदानसें शुरू होकर आखीरमें चावलोंके बलिदानकी हस्ती.

एक अच्छा लायक पुत्र पैदा करने वास्ते मांस चावल और घी खानेकी जरूरत.

सूत्रोंमेंसे मिलते प्रमाण.

मांसादि खुराकके स्मृतिके किये विभाग.

जैनोंका माना अर्थ प्रमाणकी जरूरत.

मुंबइ समाचारके लिये खास लेखक.
मि. राजाराम टी. भागवत.

ब्रह्मचारी श्रीरामेश्वरानन्दजीकी स्थापन करी धर्मसभाके २६ प्रश्नोंमेंसे प्रथमके सात प्रश्नों संबंधी कितनाक विवेचन कियागयाहै अब आठवां सवाल हाथमें लियाजावेगा. आठवां सवाल यज्ञके द्रव्य देवता का विचार और यज्ञमें पशु हिंसा संबंधी कर्त्तव्याक-र्त्तव्यके विचार संबंधी है. इस सवालके दूसरे भागका ग्यारहवें सवालके साथभी संबंध है इसवास्ते उसका समाधानभी इसी सवालके साथ कियाजावेगा. ग्यारहवां सवाल यहहै कि—यज्ञदेवता विग्रह वाले हैं या विग्रह (शरीर) रहित हैं ?

कितनेक सवालोंकी खामी भरी भाषा.

अब इस सवालके जवाब देतेहुए आठवें सवालके तीन भाग करने पडेंगे. कितनेक सवालोंकी भाषा बराबर नहीं होनेके लिये उस सवालके पूछनेवालेका मूल हेतुक्या था ? सो निश्चय करना यह भी मुश्किल पडता है. इसीतरह आठवें सवालका पहिला भाग रचने समय सवाल पूछने वालेका हेतु क्या होगा सो बराबर समझमें नहीं आसकता है. क्योंकि यज्ञके द्रव्य देवता अर्थात् क्या? सो खुलासा कहनेमें नहीं आया है इसवास्ते इस भागको छोडकर दूसरे भागपर चलेंगे.

स्वार्थी ब्राह्मण—काले सफेकी शुरूआत.

पौराणिक लोक देवताओंको हमेशह विग्रह वालेही मानते हैं

परंतु मीमांसक ऐसा मानते हैं कि देवता विग्रह रहित हैं. ब्राह्मणोंने अपनी बुद्धिके बलसे तथा वेदके आधारसे इस उत्तम फिलॉसफी का पालन कियाहै और वो फिलॉसफी उनादिवसों मे संपूर्ण रीति अच्छी हालतमेंथी. असलमें वो ब्राह्मण महान् विचार करनेवाले थे और सादी रीतिमें रहकर उच्च प्रकारके विचारमेंही समय व्यतीत करना उनका मुख्य हेतुथा. परंतु उस जमानाके बाद थोडेही अरसेमे ब्राह्मण लोक बुद्धिमें उतरते गये और विचार करनेवाले ब्राह्मण बिलकुल स्वार्थी बनगये. इस कारणसे पौराणिक साहित्य बहुत बधगया. हिंदके इतिहासका काला सफा शुरूहुआ. इस जमानाको अगर कोइ किरण प्रकाश कर सकता होवे तो वो भक्तिका किरण है और यदि वो दूर कर दिया जावेतो वो जमाना संपूर्ण रीति काला नजर पडेगा. एक विचार करने वाले अति उच्च पदवी भोगने वाले मीमांसक फिलॉसफी को उत्तेजित करनेमें मग्नथे . मीमांसक फिलॉसफी ब्राह्मणोंकी कीर्त्ति ताजी करनेवाली होनीचाहिये परंतु उसमेंभी एक काला भाग है. जिसको पौराणिक साहित्यमें संपूर्ण रीति खोलनेमें आया है पौराणिक साहित्यमें ब्राह्मणको बिलकुल स्वार्थी धर्मगुरु तरीके चितरनेमें आयाहै. और वो सारी कोम जानोकि मात्र थोडे भक्तोंके सिवाय जड बुद्धिके आदमीयोंकी ही बनी होवे ऐसा मालूम देताहै

" इतिहास " का संस्कृत अर्थ.

शास्त्री लोक जब रामायण और महाभारतके संबंधमें " इतिहास " शब्दका उपयोग करते हैं तब वो इस शब्दको संस्कृत अर्थमें अर्थात् " नीति " के अर्थमें वर्त्तते हैं संस्कृतमें इतिहास यह शब्द " ऐतीह्य " के सदृश ही है और उसका मूल इति+इहा है. "ऐतीह्य" का दृष्टांत एसा देनेमें आया है कि वटके इस वृक्षपर यक्ष रहता है. इसतरह संस्कृतमें इतिहासका अर्थ दंतकथा अथवा लोककथा जैसा ही होता है संस्कृतमें उसका अर्थ इतिहास (History) के जैसा होताही नहींहै. इसीतरह " नीति " इस शब्दका भी जुदाही अर्थ होता है " नीति " का अर्थ चाणक्की तेजकरी राजद्वारी बाबत जैसा होता है. हिंदुस्तानके नीतिशास्त्र खरे खोटेका भेद नहीं समझातेहैं परंतु वो शास्त्र नैतिक कायदाकी व्याख्या देतेहैं. शास्त्री लोक इसके सिवाय अन्य किसीभी नीतिको पिछाणते नहीं हैं, और जब वो नीतिशब्दका उपयोग करते हैं तबभी वो उसको उसी अर्थमें समझते हैं. अंग्रेजीमें " मोरे लीटी " (morality) और गुजराती या मराठीमें " नीति " का जो अर्थ होता है वो अर्थ शास्त्री लोक पूर्वोक्त संस्कृत नीतिशब्दका करते ही नहीं है. इससे मालूम होता है कि इतिहास या नीतिके कथन वास्ते संस्कृतमें कोइ शब्द ही नहीं है. जो बात खरी होती है वो हमेशह खरी ही रहती है. रामायण और महाभारत कोइ इतिहास

जैसे नहीं हैं परंतु दंतकथा जैसे हैं. इसीतरह पुराणोंमें भी दंतकथा-का भाग विशेष है.

इंद्रदेव संबंधी मतभेद.

इंद्रदेवको मीमांसक उस नाममें समाये हुए पांच जातके ध्वनि-के नाम तरीके मानते हैं और पुराण रामायण महाभारत तथा ऐसे-ही अन्य लेखोंमें उसको अहल्याका आशक और इसीकारण गौत-मके श्रापद्वारा एकहजार आंखवाले एक देव तरीके चितरनेमें आया है. हरएक चीज जैसी हालतमें मालूम होगी उसी हालतमें वांचकवर्ग सन्मुख रजु कीजावेगी और उसमेंसे पसंद करनेका काम वांचक वर्गका है.

आर्यसमाजीयोंका ख्याली अर्थ.

अब इस सवालका तीसरा भाग हाथमें लिया जावेगा. वो भागभी बहुत जरूरतकाहै क्योंकि वो सवाल बहुत दफा एक आर्य समाजीको बहुत चिडानेवाला हो पडताहै और उसी सवालके लिये आर्यसमाजी अपने दूसरे भाईयोंको उतार देते हैं. आर्यसमा-जीयोंका एक बलवान् पक्ष निरुक्त के कितनेक ख्याली अर्थोंमेंसे एकको पकडकर एक शब्दका अपने ख्यालके अनुसार मन माना अर्थ देताहै वो पक्ष " अश्व " शब्दका अर्थ " ईश्वर " और " मेघ " का अर्थ " भक्ति " ऐसा करताहै अर्थात् " अश्वमेध "

का अर्थ पूर्वोक्त रीति "ईश्वरभक्ति करनेमें आताहै और "पुरुषमेध" का अर्थ मनुष्यजातिका सुधारा" ऐसा करनेमें आताहै.

सच्चाई सोधनेवालेका फरज.

जो उस मंडलमें होनेके भाग्यवान नहीं बने हैं वोतो—"अश्वमेध" और "पुरुषमेध" का अर्थ "घोडेका बलिदान" और "मनुष्यका बलिदान" ऐसा करतेहैं. पूर्वोक्त मंडलको समझानेसेभी कार्यसिद्धि होनी असंभवहै और उस मंडलके साथ अपना कोई विरोधभी नहीं है तथापि सच्चाई सोधनेवालेका एक जरूरी फरज हैकि वो इधर उधर हाथ न मारकर हरएक चीजको खरे रूपमें सोधे.

आदमीके बलिदानसे शुरु होकर आखीरमें चावलोंके बलिदानकी रूढि.

ऐत्तिरीय ब्राह्मणकी दूसरी पंचिकाके पहले प्रकरणका आठवां छंद बहुत जानने लायक है. उस छंदके शुरूमें मालूम किया गयाहै कि—

शुरूमें तो आदमीकाही बलिदान देनेमें आताथा. बाद घोडेका बलिदान देनेकी रूढि चलपडी. उसके पीछे बैलका बलिदान, पीछे मींढा (छतरे) का, पीछे बकरेका और आखीरमें

चावलोंके बलिदान देनेकी रूढि चलपडी पशुओंके बलिदानके दो भागथे. एक भाग शुद्ध बलिदानका और एक भाग अशुद्ध बलिदानका. शुद्ध बलिदानके वास्ते घोडा, बैल, छतरा और बकरा येह चार प्राणी पसंद करनेमें आयेथे. और अशुद्ध बलिदानके वास्ते उरांग उटांग, सफेद हिरण जंगली बैल और ऊंट येह चार प्राणी पसंद किये गयेथे. इस प्रकार खुराकके दो भाग कायम करनेमें आयेथे, जिनमें प्रथमके चार जातिके प्राणी खुराकके वास्ते शुद्ध गिने जाते हैं और पिछले चार जातिके प्राणी अशुद्ध गिने जाते हैं.

एक अच्छा लायक पुत्र पैदा करने वास्ते मांस चावल और घी खानेकी जरूरत.

बृहदारण्यकोपनिषद्‌के छठे प्रकरणमें नीचे लीखा मतलब मिलेगा.

एक विद्वान, प्रख्यात, सभाओंमें जानेवाला, कानको संतोष पैदा करनेवाले शब्दोंको बोलनेवाला पुत्र पैदा होवे, वो सर्व वेदोंका जानकार सातसौ वर्षकी संपूर्ण उमर भोगवे ऐसी इच्छावाले पति पत्नी दोनोंको मांस और चावल पकाकर बीचमें घी डालकर खाना चाहिये. इस तरह करनेसे वो अपने दिलपसंद पुत्रको पैदा कर सकेंगे. इसकाममें जो मांस खाना कहा गयाहै सो जुवान या जुवानीमेंसे पसार हुए बैलका होना चाहिये.

पुत्रका भोग देनेको तैयार पिता.

ऐत्तिरीय ब्राह्मणमें शुनः शेपकी एक कथा मिलती है उससे मालूम होताहैकि यज्ञमें भोग देनेके वास्ते सुनःशेप नामा लडकेको उसके बापके पासों मूल्य देकर लियागया था यहांतक कि एकसौ गाय ज्यादा देनेसे पिता खुद उस पुत्रको मारनेके वास्ते तैयार हो हाथमें छुरी लेकर आगेको बधाथा ॥

शाकुंतल और श्रौतसूत्र.

शाकुंतल बांचने वाले देख सकते हैं कि उसके पांचमें अंकमें अतिक्षपान्तु वेदकुशल एक ब्राह्मण यज्ञमें पशु वध करने समय अतिक्रूर होगयाथा. श्रौतसूत्रमें बलिदान (रुधिर) लहुवाले भी हो सकते हैं और लहु विनाके भी हो सकते हैं इसकी बाबत सोलों ब्राह्मणोंमें विवाद हुआहै अंतमें बडे गुरुने बलिदान लहुवाल्लाही होना चाहिये एसा सिद्ध किया है.

गृह्य सूत्र.

अब हम गृह्य सूत्रको हाथमें लेवेंगे. बच्चेको खुराक देना शुरू करनेकी विधिमें मांसाहारकी जरूरत पडती है. मधुपर्ककी विधिभी मांसाहार विना नहीं होती है.

मांसाहारके विषयमें वैदिक साहित्यमें किया हुआ इशारा.

भवभूतिके उत्तरराम चरित्रमें सत्यकोही चाहने वाले और

हरएक वस्तुके जानकार वसिष्ठको भी खुल्ली रीति मांस खाने वाले चितरनेमें आए हैं. वैदिक साहित्यमें ठिकाने ठिकाने पशुवध संबंधी इशारे किये गये हैं. देवताओंके वास्ते, घरे मावापोंके वास्ते, सगे संबंधी वास्ते, बडे मेहमानोंके वास्ते और जीमनवारोंके वास्ते पशुओंका वध करनेका मतलब उसमेंसे मिलता है.

मांसादि खुराकके स्मृतिके किये विभाग.

स्मृतिने खुराकके शुद्ध और अशुद्ध एसे दो विभाग कियेहैं उसमें कुल मांसको अशुद्ध नहीं वतलाया है. ऊंट, गाय, डुकर और घरकोंवडा जैसे प्राणीयोंको खानेवाला वेदके माननेका दावा नहीं करसकता है इसीतरह गठे या लसण खानेवालाभी वेदके माननेका दावा नहीं करसकता है. वकरा, छतरा, जंगली सुअर और वतक वगैरह तथा हींग खानेमें कुछभी हरकत नहीं है. दुकालमें तो हरएक किसमके मांस खानेकी आज्ञा दीगइ है. विश्वामित्रने दुकालमें कुत्तेके मांससे गुजारा कियाथा एसा पुराणोंमे खुलासा मालूम होताहै. उपनिषद् और वेदांतमें एसी वहुत कथा मिलेंगी कि जिनमें जिंदगी भयमे होवे तो मांस आगे चाहे वो शुद्धहो चाहे अशुद्ध खानेकी आज्ञा दीगई है. भक्ति मानने वाले भगवद्गीता परही आधार रखनेवाले होनेसें वो खुराकके विभाग नहीं जानते हैं. यह मततो वेदका अथवा ब्राह्मणोंका है और वो मत जिस सवालके संबंधमे है वो सवाल आज कुल हिंदमे चर्वण होरहाहै.

बुद्धधर्मकी दो प्रकारकी मान्यता.

बुद्ध धर्मके माननेवाले दहीं और दूध दोनोमें पांव रखते हैं. उनके "आमगंध सूत्र" में मालूम कियागयाहैकि झुठ बोलनेसें ठगी करनेसे इत्यादि करनेसे "आमगंध" होताहै परंतु मांस खानेसे नहीं होताहै. उनका दूसरा पुस्तक "ब्राह्मण धर्म....सूत्र" प्राणियों को मारनेका निषेध करताहै.

जैनीयोंका माना अर्थ, आधारकी जरूरत.

इस विषयमें जैनी अपने विचारमें खूब पक्के हैं. वो अजका अर्थ चावल करते हैं और कहते हैं कि ब्राह्मण लोक पीछेसे मांसाहारी होजानेके कारण अजका अर्थ बकरा करने लगगये. असल अर्थमें फेरफार करनेका आरोप बहुत युक्तिवाला है परंतु उसके संबंधमें जो दलाईल करनेमें आती हैं वो "ऐसे था ?" ऐसे होसकताहै ? इस प्रकारकी है. और उसके सबूतमें कोइभी आधार न होनेसें कोईभी विद्वान उसको मदद नहीं दे सकता. अपने मतके सबूतमें आधार देनेका काम जैनोका है.

(मुंबई समाचार तारीख ३० जौलाइ सन १९०४)

तथा मणिलाल नभूभाई द्विवेदी "सिद्धांतसार" पुस्तकमें लिखतेहैं कि—

" विवाहके संबंधमें मधुपर्ककी बात कहने लायक है. ऐसा धर्माचार हैकि आये हुए अतिथिके वास्ते मधुपर्क करना चाहिये. वरभी अतिथि ही है. असल जैसें यज्ञके वास्ते गोवध विहितथा, तैसे मधुपर्क वास्तेभी गौका वा बैलका वध विहितथा. मांस विना मधुपर्क नहीं ऐसा आश्वलायन कहता है; और नाटकादिकोंसे मालूम होता हैकि अच्छे महर्षियों वास्तेभी मधुपर्कमें गोवध किया है. आश्चर्यकी बात हैकि, जो गौ आज बहुत पवित्र गिनी जाती है तिसको प्राचीन समयमें यज्ञके वास्ते तथा मधुपर्कके वास्ते मारनेका रीवाजथा !

पाटण खंभात जेसल्मेर जयपुर आदि स्थलोंके जैनभंडार लाखों पुस्तकोंसे भरपूर हैं और विद्याके खरे भंडाररूप हैं. इसतरह दृढमूल डालकर चलाहुआ यह अहिंसारूप परमधर्म अपनी दृष्टिके आगे अद्यापि भी है. ब्राह्मणोंके धर्मको वेदमार्गको तथा यज्ञमें होती हिंसाको खरा धक्का इसी धर्मने लगाया है. बुद्धके धर्मने वेदमार्गका ही इनकार कियाथा तिसको अहिंसाका आग्रह नहींथा. यह महा दयारूप प्रेमरूप धर्मतो जैनकाही हुआ. कुछ हिंदुस्तानमेंसे पशुयज्ञ निकल गया है फक्त छेक दक्षिणमें जहां बौद्ध या जैनकी छाया बराबर पड नहीं शकी है वहां ही कायम है. " इत्यादि.

पूर्वोक्त वर्णनसे एक कमबुद्धि वालाभी समझ सकता हैकि वेदादि शास्त्रोंमें अमुक अमुक ज्ञानका भंडार भराहुआ है ! तथापि पक्षपातकी आडमें आकर सुज्ञ साक्षर सज्जन पंडितगण सत्यको

असत्य और असत्यको सत्य करनेको प्रसिद्धिमें आवे और निरक्षर श्रद्धारहित धर्मद्रोहीयोंके जालमें फंसकर अपनी सबला विद्वत्ताको अबला बनानेका कलंक लग जावे यह कैसी खेदकी बात है ! ! जबकि पंडितजी साहिब भीमसेनजी सनातन धर्मी कहाते हैं और अच्छीतरह जानते हैंकि मंत्रभाग तथा ब्राह्मण भाग दोनोंही वेदके नामसे माने जाते हैं बल्कि ब्राह्मण सर्वस्वमें अच्छीतरह ब्राह्मण भागको वेदमानना पुष्टकिया गयाहै ! और विद्यावारिधि महोपदेशक भारतधर्म महामंडल पंडित–ज्वालाप्रसाद मिश्रने दयानंद तिमिर भास्कर अर्थात् सनातन धर्म कल्पतरु नामा पुस्तकके २८२ पृष्ठसे २९४ पृष्ठ पर्यंत १२ पृष्ठमें स्वामी दयानंद सरस्वतिजीके ब्राह्मण भागकी वेद संज्ञा नहीं है इस सिद्धांतके खंडन द्वारा मंत्रभाग और ब्राह्मण भाग दोनोंकी वेद संज्ञा खूब जोरशोरसे सिद्ध करी है तथापि पंडितजी साहिब भीमसेनजीने इस अपूर्व समयमें ब्राह्मण भागको वेद माननेसे कुछक इनकार किया इससे माळूम होता हैकि पंडितजी साहिबने पूर्वावस्थाकी चाल पकडी होगी ! क्योंकि प्रथम पंडितजी साहिब पक्के आर्यसमाजी थे कई ग्रंथ आपके हाथसे छपकर प्रसिद्ध हुएहैं उनमेंसे सत्यार्थप्रकाश सन १८८४ के २८७ पृष्ठ गत.—

“ अब इसमें विचारना चाहिये कि जो जीव ब्रह्मकी एकता जगत् मिथ्या शंकराचार्यका निज मत था तो वह अच्छा मत नहीं और जो जैनीयोंके खंडनके लिये उस मतका स्वीकार कियाहो तो

कुछ अच्छा है. " इस अपूर्व हित शिक्षाको यादमें लाकर जैनीयोंको धोखा देना चाहा होगा !

अतीव शोककी बातहै कि इटावा और मुरादाबादसे गुजरांवाला (पंजाब) में पहुंचनेका तो पंडितजी साहिबने उद्यम किया परंतु अपने हाथके लिखे लेखको याद करनेका या देखनेका कि विचारनेका उद्यम किंचिन्मात्रभी नहीं किया ! क्यों करते ! यदि पंडितजी साहिब प्रथमसेही दरयाफत करके विचार करते तो पंडितजी साहिबकी तथा उनके पवित्र हाथोंके लिखे पवित्र लेखकी प्रसिद्धि किसतरह होती ?

नमूनेके वास्ते पंडितजी साहिबके लेखका कुछक उतारा किया जाताहै जिससे वाचकवृंदको मालूम होवे कि ऐसे अपूर्व लेखके लिखने वाले पंडितजी साहिब अज्ञान तिमिर भास्करके दिये वेदादि शास्त्रोंके प्रमाणको असत्य ठहरानेके वास्ते तैयार हुएथे !

पंडितजी साहिब भीमसेनजीने सन १९०७ में अठारा स्मृतियोंका पुस्तक छपवाया है जिसकी हिंदी भाषा आपनेही करी है उसमें नीचे लिखे लेख दर्ज है.

(कात्यायनस्मृति—पृष्ठ ७६).

क्षालनं दर्भ कूर्चेन सर्वत्र स्रोतसां पशोः ।
तूष्णीमिच्छाक्रमेण स्याद्व्रपार्श्वे पार्ण दारुणी ॥ १ ॥

सप्त तावन्मूर्धन्यानि तथा स्तनचतुष्टयम् ।
नाभिः श्रोणिरपानंच गोस्रोतांसि चतुर्दश ॥ २ ॥
क्षुरो मांसावदानार्थः कृत्स्नास्विष्ट कृदाहृता ।
वपामादाय जुहुयात्तत्र मंत्रं समापयेत् ॥ ३ ॥
हृज्जिह्वाक्रोडमस्थीनि यकृद्वृक्कौ गुदंस्तनाः ।
श्रोणिस्कंधसटापार्श्वे पश्वंगानि प्रचक्षते ॥ ४ ॥
एकादशानामंगानामवदानानि संख्यया ।
पार्श्वस्य वृक्कसक्थ्नोश्च द्वित्वादाहुश्चतुर्दश ॥ ५ ॥
चरितार्था श्रुतिः कार्या यस्मादप्यनुकल्पशः ।
अतोऽन्नेनहोमः स्याच्छागपक्षे चरावपि ॥ ६ ॥
अवदानानि यावंति क्रियेरन् प्रस्तरे पशोः ।
तावतः पायसान पिंडान पश्वभावेपि कारयेत् ॥ ७ ॥

भाषार्थ

यज्ञसंबंधी पशुके इंद्रिय वा छिद्रोंका दाभके कूंचेसे अपनी इच्छानुकूल क्रमसे (तूष्णीं) विना मंत्र पढे प्रक्षालन करे । और वपाश्रपणी नामक यज्ञपात्र [जिसपर रखके वपा पकाई जाती है] ढांकके पत्तोंकी वा काष्ठकी होनी चाहिये गौके शरीरमें चौदह छिद्र होते हैं सातनो ऊपर शिरमें, चार ४ थन, नाभि, (डोंडी) योनी और गुदा ॥ २ ॥ मांसके टुकडे करनेके लिये छुरा होताहै । प्रधानके वाद क्रमसे वपाको लेकर सब स्विष्टकृत् पर्यंत होम करे और

उस समय मंत्रको समाप्त करे अर्थात् प्रधान याग और स्विष्टकृत् दोनों मंत्रोंको मिलाकर एक ही वार वपाकी आहुति देवे ॥ ३ ॥ हृदय, जिह्वा, गोड, हड्डी, जिगर, वृषण, गुदा, स्तन, श्रोणी, कंधे और सटा (ठाठे) दोनों पार्श्व ये पशुके अंग कहाते हैं ॥ ४ ॥ इन ग्यारह अंगोंके अवदान नाम टुकडे लेखानुसार गिनतीसे होते हैं और पार्श्व, वृषण (अंडकोश) और सक्थी जांघ ये दोदो होते हैं इससे पशुके चौदह अंग कहे हैं ॥ ५ ॥ प्रत्येक कल्पोक्त कामोंमें श्रुतिको चरितार्थ करना चाहिये ॥ इससे बकरा और चरु दोनों पक्षोंमें आठ ऋचाओंसे होम करना चाहिये ॥ ६ ॥ यज्ञ पशुके अंगोंके जितने अवदान नाम टुकडे, प्रस्तर नामक कुशोंपर करके रक्खे जांय उतनेही पायस नाम खीरके पिंड पशु न हो, तब भी करावे ॥७॥

(व्यास स्मृति–पृष्ठ–२५–२६.)

नाश्नीयाद् ब्राह्मणो मांसमनियुक्तः कथंचन ॥ ५५ ॥
क्रतौ श्राद्धे नियुक्तो वा अनश्नन् पतति द्विजः ।
मृगयोपार्जितं मांसमभ्यर्च्य पितृदेवताः ॥ ५६ ॥
क्षत्रियो द्वादशोनं तत् क्रीत्वा वैश्योऽपि धर्मतः ।
द्विजो जग्ध्वा वृथामांसं हत्वाप्यविधिना पशून् ॥ ५१ ॥
निरयेष्वक्षयं वासमाप्नोत्याचंद्रतारकम् ।

भाषार्थ.

यज्ञमें किसी ऋत्विजके कामपर नियुक्त हुए विना ब्राह्मण-कभी मांस न खावे ॥ ५५ ॥ यज्ञ और श्राद्धमें नियुक्त कियाहुआ ऋत्विगादि अधिकार स्वीकार करके यदि ब्राह्मण मांस न खावे तोभी पतित होजाताहै । शिकार करके लायेहुए मांसको पितर और देवताओंका पंच महा यज्ञों द्वारा पूजन करके ॥ ५६ ॥ ११ भागोंको क्षत्रिय और उसमेंसे बारहवें भागको मोल लेकर वैश्यभी खा सकताहै । ब्राह्मण वृथा मांस (जो यज्ञ वा श्राद्धका नहो) को खाकर और वेदोक्त विधिके विना पशुओंको मारकर ॥ ५७ ॥ नरकमें तबतक बसताहै जबतक चंद्रमा और तारे विद्यमान हैं ।

(शंखस्मृति–पृष्ठ ३७)

कालशाकं महाशल्का मांसं वाध्रीणसस्य च ।
खड्ग मांसं तथानंतं यमः प्रोवाच धर्मवित् ॥ २६ ॥

भाषार्थ.

ऋतुका शाक, महाशल्क नामक मछली, वाध्रीणस अधिक लंबे कानोंवाले बकराका मांस, और गेंडाका मांस इनको यमराजने श्राद्धमें अनंत फल देनेवाले कहाहै ॥ २६ ॥

(शंखस्मृति–पृष्ठ ४९–५०)

तित्तिरिं च मयूरं च लावकं च कपिंजलम् ।
वाध्रीणसं वर्त्तकं च भक्ष्यानाह यमस्तथा ॥ २७ ॥

भाषार्थ.

तीतर, मोर, लावक (लालपक्षी) कपिंजल,
वाध्रीणस, बत्तक, ये यमराजने भक्ष्य कहे हैं ॥२७॥

पुनः—यवगोधूमजाः सर्वे विकाराः पयसश्च ये ।
राजवाडवकुल्यं च भक्ष्यं पर्युषितं भवेत् ॥ ३४ ॥

भाषार्थ.

जौं, गेहूं, दूध,–इनसे बने सब विकार और राजवाडव नामक जीवका मांस ये वासी (धरे हुए) भी भक्ष्य हैं ॥ ३४ ॥

(गौतम स्मृति–४२)

तिलमाषव्रीहियवोदकदानैर्मासं पितरः प्रीणंति,
मत्स्यहरिणरुरुशशकूर्मवराहमेषमांसैः संवत्सरं,
गव्यपयःपायसैर्द्वादशवर्षाणि, वाध्रीणसेन मांसेन
कालशाकलोहखड्गमांसैर्मधुमिश्रैश्चानंत्यम् ॥ १ ॥

भाषार्थ.

तिल, माष (उडद) धान, जौ और जलसे किये श्राद्धसे

एक मासतक पितर तृप्त होते, मछली, हिरण, रोज, शश (खरगोश,) कछुआ, भैंसा,* और मेढा इनके मांससे एक वर्ष तक, गौके दूध, पायस (खीर) और बडे २ कानोंवाले बकरेके मांससे बारह वर्ष तक।

उस उस ऋतुके शाक, लाल बकरा, गेंडा इनके शहद मिले मांसके पिंडोसे अनंतकालतक पितरोंकी तृप्ति होतीहै ॥ १ ॥

गौतम स्मृति पृष्ठ ४९.

धर्मार्थेऽव्यालहतादृष्टदोषवाक्प्रशस्तान्यभ्युक्ष्योपयुंजीतोपयुंजीत ॥२॥

भाषार्थ.

यज्ञादि धर्मके लिये जो पशुपक्षी विधिपूर्वक मारे गये हों, जिनको सांपने न काटा हो, जिनमें शास्त्रसे वा प्रत्यक्षसे कोई दोष न देखा गयाहो, और वाणीसे जो प्रशस्त हों ऐसे जीवोंके मांसको देवता तथा पितरोंका पूजन समर्पण करके उपयोगमें लावे ॥ २ ॥

(वसिष्ठस्मृति–पृष्ठ २०–२१)

पितृदेवतातिथिपूजायां पशुं हिंस्यात् ॥ ९ ॥

मधुपर्के च यज्ञे च पितृदैवतकर्मणि ।

---

* नहीं मालूम पंडित भीमसेजीने "वराह" जिसका अर्थ मनुस्मृतिकी भाषाटीकामें पंडित ज्वालाप्रसादजीने जंगली सूअर लिखाहै–भैंसा क्यों लिख दिया ?

अत्रैव च पशुं हिंस्यान्नान्यथेत्यब्रवीन्मनुः ॥ ६ ॥
नाकृत्वा प्राणिनां हिंसां मांसमुत्पद्यते क्वचित् ।
न च प्राणिवधः स्वर्ग्यस्तस्माद्यागे वधोऽवधः ॥ ७ ॥
अथापि ब्राह्मणाय वा राजन्याय वाऽभ्यागताय
वा महोक्षं वा महाजं वा पचेदेव मस्यातिथ्यं कुर्वंतीति ॥८॥

भावार्थ.

पितर देवता और अतिथियोंकी पूजामें शास्त्रोक्त विधिसे पशु हिंसा करे (परंतु यह कलियुगमें लोक विक्रुष्टादि दोष होनेसे वर्जित है) ॥ ५ ॥

मधुपर्क, यज्ञ, (अग्निष्टोमादि) अष्टका श्राद्धादि पितृकर्म, और देवकर्म इन्हींमें पशुकी हिंसा करे यह मनुजीने कहाहै ॥ ६ ॥ प्राणियोंकी हिंसा किये विना कहींभी मांस प्राप्त नहीं होसकता और प्राणियोंका वध करना दुःखका हेतु है । इससे यज्ञमें पशुओंका वध करना हिंसा नहीं है । और अन्यत्र जहां हिंसा अवश्य है वहां न मारे ॥ ७ ॥ औरभी श्रुतिमें लिखाहै कि आये हुए ब्राह्मण, वा क्षत्रिय-राजा, वा अतिथिके लिये वडे बैल, वा वडे बकराको पकावे, ऐसेही इस ब्राह्मणादिका अतिथि सत्कार करते हैं ॥ ८ ॥

(वसिष्ठस्मृति पृष्ठ-३८)

ब्राह्मणकुले वा यल्लभेत तद्भुंजीत, सायं प्रातर्मधुमांसपरिवर्जम् ॥ १८ ॥

भाषार्थ.

अथवा ब्राह्मणके घरसे मद्य मांसका अंश छोडके अन्य जो मिलजाय वही सायं प्रातः दो वार खा लेवे ॥ १८ ॥

(वसिष्ठस्मृति-पृष्ठ ४३)

नियुक्तस्तु यदा श्राद्धे दैवे वा मांसमुत्सृजेत् ।
यावंति पशुरोमाणि तावन्नरकमृच्छति ॥ ३१ ॥

भाषार्थ.

जब श्राद्धमें निमंत्रण स्वीकार करके यजमानके यहां किसी कारण मांस बनाया परोपा जाय और उसको त्याग देवे तो पशुके शरीरमें जितने रोम होवे उतने वर्षों तक नरकमें बसता है ॥३१॥

(वसिष्ठस्मृति पृष्ठ ५९)

तथा धेन्वनड्हौ मेध्यौ वाजसनेयके विज्ञायेते ॥ ३४ ॥
खड्गेतु विवदंत्यग्राम्यशूकरे च ॥ ३५ ॥

भाषार्थ.

गौ बैल मेध्य नाम मेधाके अनुकूलहैं ऐसा वाजसनेय श्रुतिसे जानाजाता है ॥ ३४ ॥

गैंडा और वनके सूअर भक्ष्य होने न होनेमें विवाद करते हैं ॥ ३५ ॥

इत्यादि-पूर्वोक्त लेख पंडितजी साहिब भीमसेनजी के ही हैं अब थोडासा उतारा विद्यावारिधि पंडित ज्वालाप्रसाद मिश्र भारतधर्म महामंडलके महोपदेशकके लेखोंका कियाजाताहै.

(मनुस्मृति-अध्याय ५-)

यज्ञार्थं पशवः सृष्टाः स्वयमेव स्वयंभुवा ।
यज्ञस्य भूत्यै सर्वस्य तस्माद्यज्ञे वधोऽवधः ॥ ३९ ॥
ओषध्यः पशवो वृक्षास्तिर्यञ्चः पक्षिणस्तथा ॥
यज्ञार्थं निधनं प्राप्ताः प्राप्नुवन्त्युत्सृतीः पुनः ॥ ४० ॥
मधुपर्के च यज्ञे च पितृ दैवतकर्मणि ॥
अत्रैव पशवो हिंस्या नान्यत्रेत्यब्रवीन्मनुः ॥ ४१ ॥
एष्वर्थेषु पशून् हिंसन् वेदतत्त्वार्थविद् द्विजः ॥
आत्मानं च पशुं चैव गमयत्युत्तमां गतिम् ॥ ४२ ॥

भाषार्थः

यज्ञके निमित्त पशुवध करनेमें हिंसा नहीं लगती इसको दिखाते हैं ब्रह्माजीने यज्ञ और संपूर्ण यज्ञोंकी सिद्धिके निमित्त आपही पशुओंको रचाहै, इस कारण यज्ञमें पशुवधकी हिंसा नहीं लगती ॥ ३९ ॥

यज्ञके निमित्त व्रीहि (जव) आदि औषधि, पशु, बिल्व आदि वृक्ष खदिर, पलाश, यज्ञमें, कछुआ आदि तिर्यक्जीव, कपिञ्जल आदि पक्षी, नाशको प्राप्त हुए उत्तम जन्मको प्राप्त होते हैं, अर्थात् यज्ञमें मरनेसे पशु आदिको उत्तम योनिमें जन्म होताहै ॥४०॥

मधुपर्क, ज्योतिष्टोम आदि यज्ञ, पितर और देव कार्यमें ही पशुका वध करना चाहिये, अन्यत्र नहीं यह वचन स्वयं मनुजीने कहाहै, इस कारण वृथा मांस भक्षणका सर्वथा निषेध है. ॥४१॥

वेदके तत्त्व अर्थको जाननेवाला द्विज मधुपर्क आदिकोंमें पशुको मारता हुआ अपनी आत्मा और पशुकी आत्मा, इन दोनोंको उत्तम गतिकी प्राप्ति करताहै. ॥ ४२ ॥

रामायण.

महाकवि श्रीवाल्मीकि ऋषि विरचित रामायण जिसपर विद्यावारिधि पंडित ज्वाला प्रसादजीने हिंदी भाषामें टीका कीहै उ-

सके बालकांडके १४ सर्ग पत्र ३० में अश्वमेध यज्ञ संबंधि ऐसा वर्णन किया है.

नियुक्तास्तत्र पशव स्तत्तदुद्दिश्य दैवतम् ।
उरगाः पक्षिणश्चैव यथा शास्त्रं प्रचोदिताः ॥ ३० ॥
शामित्रे तु हयस्तत्र तथा जलचराश्च ये ।
ऋषिभिः सर्वमेवैतन्नियुक्तं शास्त्रतस्तदा ॥ ३१ ॥
पशूनां त्रिशतं तत्र यूपेषु नियतं तदा ।
अश्वरत्नोत्तमं तत्र राज्ञा दशरथस्य ह ॥ ३२ ॥
कौशल्या तं हयं तत्र परिचर्य समंततः ।
कृपाणैर्विशशासैनं त्रिभिः परमया मुदा ॥ ३३ ॥
पतत्रिणा तदा सार्धं सुस्थितेन च चेतसा ।
अवसद्रजनीमेकां कौशल्या धर्म काम्यया ॥ ३४ ॥
होताऽध्वर्युस्तथोद्गाता हयेन समयोजयन् ।
महिष्या परिवृत्त्याथ वावातामपरां तथा ॥ ३५ ॥
पतत्रिणस्तस्य वपा मुद्धृत्य नियतेंद्रियः ।
ऋत्विक् परमसंपन्नः श्रपयामास शास्त्रतः ॥ ३६ ॥
धूमगंधं वपायास्तु जिघ्रतिस्म नराधिपः ।
यथाकालं यथान्यायं निर्णुदन् पापमात्मनः ॥ ३७ ॥
हयस्य यानि चांगानि तानि सर्वाणि ब्राह्मणाः ।
अग्नौ प्रास्यंति विधिवत् समस्ताः षोडशर्त्विजः ॥ ३८ ॥

भाषार्थ.

यज्ञस्थलमें शास्त्रानुसार देवताओंके लिये अनेक प्रकारके सर्प-विहंग तुरंग स्थापन किये. ॥ ३० ॥

और जलचर प्रभृति जंतु जहांतक इकट्टे किये गयेथे यज्ञ करानेवालोंने उन्हें बलि देनेके अर्थ यथा स्थानमें शास्त्रानुसार बांधा ३१

पहले कहे हुए थंभोंमें तीनसौ पशु और महाराजका अश्वरत्न बंधाथा ॥ ३२ ॥

पटरानी कौशल्याजीने उस अश्वकी परिचर्या करके तीन खड्गसे प्रसन्नतापूर्वक उसको वध किया ॥ ३३ ॥

तदनंतर कौशल्याजी वहां धर्मप्राप्तिकी कामनासे उस अश्वके निकट एक रात्रितक रहीं ॥ ३४ ॥

तब होता अध्वर्यु व उद्गाताओंने राजमहिषी व परिवृत्ति सहित वावाताको " क्षत्रिय राजकी वैश्या स्त्री वावाता और शूद्रा स्त्री परिवृत्ति कही जाती है " यज्ञीय अश्वके साथ नियोजित किया ॥३५॥

तब श्रुति कार्यवित् जितेंद्रिय ऋत्विज उस घोडेकी चरबी ले शास्त्रानुसार होम करने लगे ॥ ३६ ॥

नरपतिगण यथासमय न्यायपूर्वक अपने पाप कटनेके अर्थ वसागंधमय धूमगंध सूंघने लगे ॥ ३७ ॥

अनंतर सोल्रह ऋत्विज ब्राह्मण घोडेके सब अंग प्रत्यंगादि काट काट कर अग्निमें विधिपूर्वक आहुति देने लगे ॥ ३८ ॥

तथा अयोध्याकांड सर्ग ९१ वेमें भरद्वाजजीने भरत राजाको अतिथि सत्कार किया जिसमें अनेकप्रकारके मद्यमांस भी खानपानमें दिये गये इत्यादि विस्तार पूर्वक वर्णन है. यहांतकाकि सेनामें जो कुत्ते आदि पलाऊ जीवथे उनके भोजनार्थ आम आदि फलोंके काढेसे पचाये खस्सी शूकरादिकोंका मांस, मूंग, उर्द आदिकी दाल हींगआदि सुगंधित द्रव्योंसे बघारी हुई व औरभी अनेकप्रकारके श्रेष्ठ व्यंजन विद्यमानथे. * इत्यादि–पत्र ७१५ से ७२० पर्यंत— तथा अयोध्याकांडके पत्र ७२९ में इसप्रकारका लेख है—

शुक्रपाण मर्मादान मेध्यान् कृष्णमृगान् रुरून् ॥
राशीकृतान् शुष्कमाणानन्यान् कांश्चन कांश्चन ॥ ३४ ॥
तद्दृष्ट्वा कर्म सौमित्रेर्भ्राता भीतोऽभवत्तदा ॥
क्रियतां बल्यश्चेति रामः सीतामथाब्रवीत् ॥ ३५ ॥

---

* यद्यपि पंडित ज्वालाप्रसादजीने "सेनामें जो कुत्ते आदि पलाऊजीवथे उनके भोजनार्थ" ऐसा लिख दिया है परंतु "आजैश्चापि च वाराहैर्निष्ठानवरसंचयैः ॥ फलनिर्यूहसंसिद्धैः सूपैर्गंधरसान्वितैः ॥ ६७ ॥" इस श्लोकमें एसा अर्थ प्रतीत नहीं होताहै कि यह कुत्तोंके वास्ते हो !

अग्रं प्रदाय भूतेभ्यः सीताथ वरवर्णिनी ॥
तयोरुपाददद्भ्रात्रोर्मधुमांसं च तद्धृशम् ॥ ३६ ॥
तयोस्तुष्टिमथोत्पाद्य वीरयोः कृतशौचयोः ॥
विधिवज्जानकी पश्चाच्चक्रे सा प्राणधारणम् ॥ ३७ ॥
शिष्टं मांसं निकृष्टं यच्छोषणायावकल्पितम् ॥
तद्रामवचनात्सीता काकेभ्यः पर्यरक्षत ॥ ३८ ॥

भावार्थ.

उस समय बाणसे मारे हुए दश पवित्र कालें मृग अच्छी प्रकारसे सुखाये हुवे अग्निमें पक्क किये हुए लक्ष्मणजीनें तैयार कर रक्खेथे और अनेक वस्तु तैयार कर लीथी ॥ ३४ ॥

भाईका यह कार्य देखकर रामचंद्र बहुत प्रसन्न हुए और जानकीजीसे बोले कि अब बलिकर्म करना उचितहै ॥ ३५ ॥

सुंदर महाराणी जानकीजी प्रथम प्राणियोंके निमित्त बलिप्रदान करके पीछे दोनों भ्राताओंको वह शहत और मांस देती हुई ॥ ३६ ॥

जब वह दोनों भाई महावीर भोजन कर कुल्ला आदि करके पवित्र हुए पीछे जानकीजीने आपभी कुछ थोडासा भोजन किया ॥ ३७ ॥

बाकी जो निकृष्ट मांस बचरहा वह सुखानेको रखदिया और रामके कहनेसे जानकी कौओंसे उसकी रक्षा करने लगीं. ॥३८॥

तथा सर्ग ९६ अयोध्याकांडमें ऐसे लिखाहै.

तां तदा दर्शयित्वा तु मैथिलीं गिरिनिम्नगाम् ।
निषसाद गिरिप्रस्थे सीतां मांसेन छंदयन् ॥ १ ॥
इदं मेध्यमिदं स्वादु निष्टप्तमिदमग्निना ।
एवमास्ते स धर्मात्मा सीतया सह राघवः ॥ २ ॥

भाषार्थ.

उस समय श्रीरामचंद्रजी जनक कुमारी सीताजीको पहाडी नदी मंदाकिनीके दर्शन कराकर चटान पर बैठ गये वह मंत्रोंसे पवित्र मांस सीताजीको दिखाय कहने लगे ॥ १ ॥

हे जानकी ! यह मांस अति पवित्रहै और स्वादयुक्तहै और अग्निमेंभी भलीभांति पकाया गयाहै धर्मात्मा रामचंद्रजी सीताजीसे यह कहते हुए चित्रकुट पर्वतकी चटान पर बैठे हैं ॥ २ ॥ पत्र २३०

तथा युद्धकांड सर्ग ८० पत्र २२६

सर्वतोग्निं समास्तीर्य शरपत्रैः सतोमरैः ।
छागस्य सर्वकृष्णस्य गलं जग्राह जीवतः ॥ ८ ॥
शरहोमसमिद्धस्य विधूमस्य महार्चिषः ।
बभूवुस्तानि लिंगानि विजयं दर्शयंति च ॥ ९ ॥

भाषार्थ.

तब इंद्रजीतने तोमरस्वरूप शरपत्रोंसे अग्नि प्रज्वलित की और एक जीते हुए काले छागकी गर्दन पकडी ॥ ८ ॥ और उस छागको अग्निमें होमदिया, होम करतेही वह शरपत्रोंपर फैली हुइ अग्नि धुमरहित होगइ, और उसमें निकली हुई शिखाओंसे विजयकी सूचना देनेवाले चिन्ह प्रकाशित हुए.

निर्णयसिंधु.

श्री काशीवासि महामहोपाध्याय श्री कमलाकरभट्ट विरचित निर्णयसिंधु नामाग्रंथ जिसपर—मुरादाबाद निवासि महोपदेशक भारतधर्म महामंडल विद्यावारिधि श्री पंडितज्वालाप्रसाद मिश्रकृत सेतुनामक भाषा टीका बनी हुई है और जो विक्रम संवत् १९६१ में बंबई श्री वेंकटेश्वर छापखानामें छपा है उसके पृष्ठ ४७७—७८ में नीचे लिखा पाठ है.

> देवराच्च सुतोत्पत्तिर्मधुपर्के पशोर्वधः ।
> मांसादनं तथा श्राद्धे वानप्रस्थाश्रमस्तथा ॥
> दत्ताक्षतायाः कन्यायाः पुनर्दानं परस्य च ।
> दीर्घकालं ब्रह्मचर्यं नरमेधाश्वमेधकौ ॥
> महाप्रस्थानगमनं गोमेधश्च तथा मखः ।
> इमान् धर्मान् कलियुगे वर्ज्यानाहुर्मनीषिणः ॥

—भाषार्थ—

देवरसे पुत्रकी उत्पत्ति, मधुपर्कमें पशुकावध, श्राद्धमें मांसप्रदान, वानप्रस्थ आश्रम, पुरुषके संगरहित विवाही कन्याको फिर व्याहना, बहुत कालतक ब्रह्मचर्य, नरमेध और अश्वमेध यज्ञ, महाप्रस्थान (अतिदूर) गमन, गोमेध यज्ञ इतने कार्य बुद्धिमानोंने कलियुगमें वर्जित किये हैं.

[यह बृहन्नारदीयका कहना है]

पुनः पृष्ठ—४७८—

ऊढायाः पुनरुद्वाहं ज्येष्ठांशं गोवधस्तथा ।
कलौपंच न कुर्वीत भ्रातृजायां कमंडलुम् ॥

(इति हेमाद्रौवचनात्)

—भाषार्थ—

हेमाद्रि कहते हैं कि, विवाहीका पुनर्विवाह, ज्येष्ठ पुत्रका अधिक भाग, गौविशसन, भ्राताकी पत्नीका स्वीकार, संन्यास ये पांच बातें कलियुगमें न करनीं.

पुनरपि पृष्ठ ४७८—हेमाद्रौ ब्राह्मे—

“ गोत्रान्मातुः सपिंडाच्च विवाहो गोवधस्तथा ।
नराश्वमेधौ मद्यंच कलौ वर्ज्यं द्विजातिभिः ॥ ”

भाषार्थ.

हेमाद्रिमें ब्रह्म पुराणका लेखहै कि, माताके सपिंड और गोत्रसे विवाह, गौ विशसन, नरमेध अश्वमेध और मद्य, ये सब कलियुगमें द्विजातियोंको त्यागनी चाहिये.

पुनरपि पृष्ठ ४७०.–हेमाद्रिमें आदित्य पुराणका कथन हैकि नीचे लिखे काम कलियुगमें वर्जितहैं.

गोसंज्ञप्तिश्च गोसवे सौत्रामण्यामपि सुरा ।
वरातिथिपितृभ्यश्च पशूपाकरणक्रिया ॥

भाषार्थ.

गोसव यज्ञमें पशुको मारना, सौत्रामणि यज्ञमें सुरापान, वर अतिथि पितरके निमित्त पशुवध करना–येभी कलियुगमें वर्जितहैं.

पुनः पृष्ठ ४८२.

अग्निहोत्रं गवालंभं संन्यासं पलपैतृकम् ।
देवराच्च सुतोत्पत्तिः कलौ पंच विवर्जयेत् ॥

भाषार्थ.

अग्निहोत्र, गवालंभ, संन्यास, मांसके पिंड, देवरसे पुत्र-सूर्वोक्त कलियुगमें वर्जित हैं ॥

तथा निर्णयसिंधु पृष्ठ—५३५.

याज्ञवल्क्यः—" हविष्यान्नेन वै मासं पायसेन तु वत्सरम् ।
मत्स्यहारिणकौरभ्रशाकुनच्छागपार्षतैः ॥
ऐणरौरववाराहशाशैर्मांसैर्यथाक्रमम् ।
मासवृध्याभितृप्यंति दत्तैरिह पितामहाः
खड्गामिषं महाशल्यं मधु मुन्यन्नमेव च ।
लोहामिषं कालशाकं मांसं वार्ध्रीणसस्य च ॥ "

—भाषार्थ—

याज्ञवल्क्यने कहा है कि, हविष अन्न महीनेतक और खीर एक वर्ष तक पितरोंको तृप्त रखता है.

मत्स्य, हरिण, उरभ्र, पक्षी, छाग, पृषत्, एण, रुरु, बराह, शशा, इनके मांसके देनेसे पितर क्रमसे एक २ मासकी वृद्धिसे तृप्त होते हैं.

गेंडेका मांस, महाशाक, शहत, मुनियोंका अन्न, वार्ध्रीणसका मांस श्रेष्ठ है ॥ *

---

* पंडित ज्वालाप्रसादजीने निर्णयसिंधुका भाषाटीका रूप पूल (सेतु) बनाया उससमय याज्ञवल्क्य स्मृति ग्रंथको सन्मुख रक्खा मालूम नहीं देता है क्योंकि याज्ञवल्क्यस्मृति संवत् १९४८ निर्णय-सागर प्रेस मुंबईकी छपी जिसपर गौड वंशावतंस बुधशिव सहायके

तथा–निगमः– " त्रिः पिबं त्विद्रियक्षीणं श्वेतं वृद्धमजापतिम् ।
वार्ध्रीणसं तु तं प्राहुर्याज्ञिकाः श्राद्धकर्मणि ॥"

वार्ध्रीणसो–जरच्छाग इति मेधातिथिः ॥

कात्यायनः–' छागोस्रमेषानालभ्य–शेषाणि क्रीत्वा लब्ध्वा वा
स्वयं मृतानां वाहृत्य पचेत् ॥'

कौर्मे–" क्रीत्वा लब्ध्वा स्वयं वाथ मृतानाहृत्य वा द्विजः ।
दद्याच्छ्राद्धे प्रयत्नेन तदस्याक्षय्यमुच्यते ॥ "

पुत्र रविदत्त शास्त्रीकी भाषा टीका है उसके दशम श्राद्ध प्रकरणके पृष्ठ ९४ में इसप्रकारका पाठ है.

हविष्यान्नेन वै मासं पायसेन तु वत्सरम् ।
मात्स्यहारिणकौरभ्रशाकुन च्छागपार्षतैः ॥ २५८ ॥
ऐणरौरववाराहशाशैर्मांसैर्यथाक्रमम् ।
मासवृद्ध्याभितृप्यंति दत्तैरिह पितामहाः ॥ २५९ ॥
खड्गामिषं महाशल्कं मधु मुन्यन्नमेव च ।
लोहामिषं महाशाकं मांसं वार्ध्रीणसस्य च ॥ २६० ॥
यद्ददाति गयास्थश्च सर्वमानंत्यमश्नुते ।

(भाषार्थ) तिल जव उडद आदि हविष्य अन्नसें ब्राह्मणोंको भोजन करवावे तो पितरोंकी तृप्ति एक महीनातक रहती है खीरका

॥ भाषार्थ. ॥

निगममें लिखाहैकि, जिसकी क्षीण इंद्रि तीनों, (मुख, कान, नाक-) एकवार जल पीवै ऐसे श्वेत और वृद्ध अजाओंके पतिको याज्ञिक श्राद्धकर्ममें वार्ध्रीणस वर्णन करते हैं.

मेधातिथिने वृद्ध छागको वार्ध्रीणस कहाहै.

कात्यायनने लिखाहैकि, छागका मांस और मेष इनको लेकर और शेषोंको खरीद कर वा लेकर वा स्वयं मरेंको लाकर उनके मांसको पकावे.

भोजन करवानेसें एक वर्ष तक तृप्ति रहती है और मच्छ लाल हरिण मींढा पक्षी बकरा बिंदुवोंवाला मृग कालामृग रोझ जंगली शूअर शुसा इनके मांसोंसें यथाक्रमसे एक एक महीनेकी वृद्धिके क्रमसे पितरोंकी तृप्ति रहती है जैसे हविष्य अन्नसें १ महीना मच्छके मांससे २ महीने लाल हरिणके मांससे ३ मींढाके मांससे ४ महीने इसीक्रमसे जान लेना ॥ २५८ । २५९. ॥

और गैंडाका मांस महाशल्क मच्छका मांस शहद श्यामाक आदि मुनियोंका अन्न लाल बकराका मांस काला शाक बूढा सफेद वर्णवाला बकराका मांस इनको जो पितरोंके वास्ते देता है और गयाजीमें जो कुछ शाक फल आदि पितरोंके वास्ते दिया जाताहै वह सब अक्षयगुण होता है इत्यादि ॥ २६० । २६१ ॥

कूर्म पुराणका वाक्य हैकि खरीद कर वा प्राप्त होकर वा स्वयं मरोंको लाकर द्विज श्राद्धमें प्रदान करदे तो पितर अक्षय तृप्त होते हैं.*

---

* नहीं मालूम विद्यावारिधि पंडितजी साहिब उदार दिलके होकरभी "आलंभ आलंभन" शब्दके अर्थमें कृपणता करते क्यों दिखलाइ देतेहैं ? जोकि कहीं कोइ अर्थ नजर आताहै कहीं कोइ ! मिश्रभाष्यमें आपने प्रायः ऐसाही ढंग रक्खाहै ! परंतु कात्यायन और कूर्म पुराणके वाक्यका पूर्वोक्त आपका लिखा अर्थ देखनेसे बुद्धिमान् पुरुष स्वयंही आपकी चालाकीको समझ सकते हैं ! क्यों कि "छागका मांस और मेषको 'लेकर' और शेषोंको 'खरीद कर' 'वा लेकर' वा स्वयंमरोंको 'लाकर'—तथा—'खरीद कर' वा 'प्राप्त होकर' इन शब्दोंमें कुछ न कुछ जरूरही भेद छिपाना चाहाहै ! अन्यथा "छागोमेषश्चालभ्य— छागका मांस और मेष इनको लेकर—शेषाणि क्रित्वा लब्ध्वा वा—और शेषोंको खरीद कर वा लेकर" इस प्रकार भिन्न भिन्न वर्णन करनेकी क्या जरूरत थी ? असल मतलब तो यह हैकि आलम्भन शब्दका अर्थ स्वयं मारनेकाहै जिससे ऐसा अर्थ बनता है कि—छागादिको मार कर और बाकी श्राद्ध प्रकरणमें कहे पशुओंका मांस खरीदकर अथवा स्वयं मारकर अथवा स्वयंमरोंको लाकर उनके मांसको पकावे' इस प्रकार अर्थ क-रनेमें कोइभी शब्द निरर्थक या भ्रांति जनक नहीं ठहर

निर्णयसिंधु पृष्ठ–५३५–५३६—

दत्तस्य मांसस्याभक्षणे दोषमाह मनुः—

" नियुक्तस्तु यथान्यायं यो मांसं नात्ति मानवः ।

स प्रेत्य पशुतां याति संभवानेक विंशतिम् ॥ "

अत्र वहुषु वचनेषु श्राद्धे मांस मधुनोः प्राशस्त्योक्तेः ॥

" विना मांसेन यच्छ्राद्धं कृतमप्यकृतं भवेत् । इति हेमाद्रौ देवलोक्तेः ॥ "

सकता है. परंतु पंडितजी साहिबने इसका खुलासा नहींकरा है इससे साफ जाहिर है कि इसमें कुछ न कुछ भेद है, जिसका विवेकी निष्पक्षपाती बुद्धिमान् पुरुष विचार करेंगे तो स्वयंही ज्ञात होजावेगा कि वेदमंत्रोंमें " आलभेत " पाठ आता है, तथा गवालंभका निषेध कलियुगमें कहा गया है ! इससे और युगमें गवालंभ सिद्ध होता है ! सो इनके अर्थोंको वदलने वास्तेही पंडितजी साहिबने प्रयास किया होगा ! परंतु इसमें एक अन्य वातभी हैकि यदि पंडितजी साहिबकाही अर्थ आलंभ शब्दका मान लिया जाय तो, वो कौन कामथा ? जोकि अन्य युगमें होताथा और कलियुगमें निषेध किया गया- इसका निर्णय अवश्यमेव होना चाहिये. इसी वास्तेही मालूम देता है कि पंडितजी साहिबने कुछ भेद छिपाने वास्तेही प्रयास किया होगा ! इतनाही नहीं वलकि महर्षि कात्यायनजीके " छागोस्रमेषानालभ्य " इस वाक्यके अर्थ करते पंडितजी साहिबने–

" यच्छ्राद्धं मधुना हीनं तद्रसैः सकलैरपि ।
मिष्टान्नैरपि संयुक्तं पितृणां नैव तृप्तये ॥
अणुमात्रमपि श्राद्धे यदि न स्याच्च माक्षिकम् ।
नामापि कीर्त्तनीयं स्यात् पितृणां प्रीतये ततः ॥ २ ॥ "

इतिहेमाद्रौ ब्राह्मोक्तेश्च मांस मधुनोः श्राद्धे नियतत्वं गम्यते ॥

छाग–उस्र और मेष–तीनके बदले छाग और मेषकाही नाम लिया है, उस्र शब्द जिसका अर्थ बैल या गाय होता है उसको छिपा ही लिया है ! यदि छाग और मेष दोही होते तो " छागोस्रमेषान् " यह बहुवचन शास्त्रकार क्यों देते ? शास्त्रकारने तो साफ छाग–उस्र और मेष तीन शब्द दिये हैं, पंडितजी साहिबने उस्र शब्दार्थको छोड दोनो ही का अर्थ लिखा है. अत एव भलीभांति सिद्ध होता है कि प्राचीन समयमें अवश्यमेव गवालंभ होता होगा इसमें शक नहीं, और इसी वास्ते महर्षियोंने कलियुगमें निषेध कियाहै.

विश्नुपुराणके तीसरे अंशके १६ वें अध्यायमें श्राद्धयोग्य द्रव्यों के वर्णनमें " उरभ्रगव्यैश्च तथा " इस पदके व्याख्यानमें टीकाकारने इस प्रकार वर्णन कियाहै–तथाहि–उरभ्रो मेष तदीयश्च गव्यंतु पयः पायसं वा । संवत्सरं तु गव्येन पयसा पायसेन वा । इति स्मृतेः मांसप्रभ्ये पाठान्मांसमेवेत्यन्ये तत्तु युगांतरीणमित्यवसेयम् । "

इति निगमोक्तेः ॥ ' वरातिथिपितृभ्यश्च पशुपाकारणक्रिया ' इति कलिवर्ज्येषु हेमाद्रावादित्य पुराणात् ।

भाषार्थ.

पृथ्वीचंद्रोदय तो सन्यास गोमेध श्राद्धमें मांस और मधु और देवरसे पुत्रकी उत्पत्ति इन पांचोंको कलियुगमें त्यागदे, इस निगमके वचनसे और हेमाद्रिमें इस आदित्यपुराणके वचनसे वर, अतिथी, पितर इनके लिये पशुको न मारे कलियुगमें जो वर्जित उनमें ये पूर्वोक्त गिनेहैं श्राद्धमें मांसका दान और वानप्रस्थ आश्रम यह कह कर इन धर्मोंको शास्त्रकारोंने कलियुगमें निषेध कहाहै ॥

पृष्ठ ५३७–मनुः–" संवत्सरंतुगव्येन पयसा पायसेन च ।

वार्ध्रीणसस्य मांसेन तृप्तिर्द्वादशवार्षिकी ॥

त्रिः पिबं त्विद्रियक्षीणं श्वेतं वृद्धमजापतिम् ।

वार्ध्रीणसं तु तं प्राहुर्याज्ञिकाः श्राद्धकर्मणि ॥२॥"

भाषार्थ.

मनुका वाक्य हैकि, गौके दूध और खीरसे वर्षदिनतक वार्ध्रीणसके मांससे बारह वर्षतक पितरोंकी तृप्ति होती है. जिसकी तीन इंद्रिय जल पीवे ऐसे श्वेतवर्ण वृद्ध अजाओंके पति बकरेको याज्ञिक श्राद्धकर्ममें वार्ध्रीणस कहते हैं.